www.emanjari.com

मंजरी

स्त्री के मन की

अंक 22 RNI Title Code: BIHBIL02442 वर्ष 2023

वारिस और विरासत

(औरत के हक में)

Sulabh Sanitation Movement

Sulabh International
Social Service Organisation

कविता

यूँ भी

पार्क, स्टेशन, सड़क हो
या बाजार
ये जो तुम हर जगह मुझसे
बीस कदम आगे चलते हो न
नाक की सीध में एकदम
सीना तान कर
सतर कन्धे
हथेली पर सूरज उगाए
और सोचते हो कि
आगे हो मुझसे...?

गलत सोचते हो तुम
बिल्कुल गलत
मैं और बीस कदम
अपनी मर्जी से पीछे होकर
कहीं छिप जाऊँ अगर
तो क्या हो
सोचा है कभी ?

अपनी हथेलियों में ये जो तुम
सूरज की दिपदिपाहट लिए
दर्प से घूमते हो,
तुम्हारे आँगन में ओस से भीगे
चाँदनी में नहाए महकते
प्रार्थनारत ये हरसिंगार,
पिंजड़े में चहकती मैना,
द्वारे चटकते गुलमोहर
और अमलतास की धमक
नाते–रिश्तों की सरगोशियाँ
ये महफिलों और
उत्सवों की रौनकें
आंगन में सजे इन्द्रधनुष
खान–पान के वैभव
और सुकून की नीदें ...
ये सब भी छिप जाएंगी
उसी पल!

लम्बे डग भरते
तुम जो ये सोचते हो न कि
तुमने मुझे पीछे छोड़ा हुआ है
तो सुनो –
गलतफहमी है तुम्हारी
सच तो ये है कि
पीछे तुमने नहीं छोड़ा
बल्कि...
मैंने ही अपने माथे का सूरज
तुम्हारी हथेली में रोप
तुमको आगे किया हुआ है ...!!

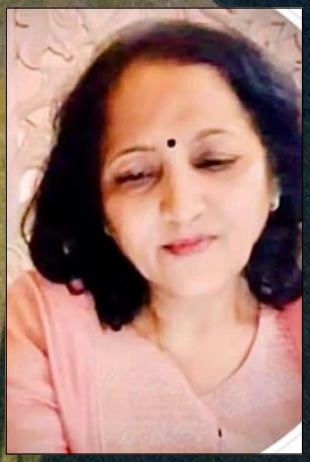

उषा किरण

चित्रकला एवं संगीत में एम.ए., पी–एच.डी.। विभागाध्यक्ष ललित कला विभाग, मेरठ कॉलेज, मेरठ। कविता एवं रेखांकन संग्रह "ताना–बाना" एवं आठ साझा संग्रह के रूप में पुस्तकें प्रकाशित। इनकी कहानियां एवं कविताएं कई प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं।

पेंटिंगः अमृता शेरगिल

संकल्पना

इक्विटी फाउंडेशन लंबे अरसे से एक वेब पत्रिका शुरू करने के बारे में सोच रहा था। मकसद था महिला और समाज के मुद्दों को शिद्दत से उठाना। जब हमने चीजों को एक साथ कर उसे पत्रिका के रूप में सजाने के बारे में सोचना शुरू किया तो इस क्रम में कई लोगों से जुड़े। हमने महिलाओं को पत्रिका से जोड़ने की कोशिश की। हम दोस्तों से मिले और परिचितों से बात की। महिलाओं के सामाजिक समूहों और शिक्षाविदों के एक साथ जुड़ने के बाद जो स्वरूप सामने आया वह है 'मंजरी'।

मंजरी यानी कोंपल। शाखों में फूटने वाली नन्ही पत्तियां। नई शाखों का सृजन करने वाले इन कोंपल को कुम्हलाने से बचाना जरूरी है नहीं तो पूरे पेड़ का विस्तार कुंद हो जाएगा। ठीक उसी तरह स्त्री के मन की मंजरी को सहेजने की जरूरत है वरना पेड़रूपी समाज विकृति का शिकार हो जाएगा। हमारा प्रयास इसी मंजरी को पुष्पित पल्लिवत करने का है जो औरत की सोच और उसकी को. शिश को सही दिशा प्रदान कर सके।

मंजरी के सृजन के दौरान पहले तो 10–30 लोगों का एक ढीला–ढाला समूह बना। विचार आते गए। अलग–अलग विषयों और मुद्दों पर। समूह में कुछ अनमनी महिलाएं थीं तो कुछ सहानुभूति दिखाने वाले पुरुष भी। कुछ महज एक या दो बैठकों में शामिल हुए तो कुछ जब मन में आया, आ गए। बाकी बचे लोगों ने 'मंजरी' को मुकाम पर ले जाने का दायित्व अपने कंधों पर लिया। 'मंजरी' का लक्ष्य एक ऐसा मंच उपलब्ध कराना है जहां बुद्धिजीवियों को उनकी खुराक मिले तो शोधकर्ताओं की जिज्ञासा शांत हो। क्रियान्वयन के लिए बहस और तर्क के रास्ते हमेशा खुले रहें। इक्विटी की लगातार कोशिश रही है शोध और क्रियान्वयन के बीच की दूरी को पाटना। ऐसे में हमारा मानना है कि शोध तब तक अप्रासंगिक हैं जब तक कि इनका लोगों की जिंदगी और उनके क्रियाकलापों से जुड़ाव न हो। ठीक इसी तरह सिविल सोसायटी के तौर पर अगर हम जमीनी सच्चाई से वाकिफ न रहें, जिनमें सामाजिक प्रक्रियाएं और ऐतिहासिक मूल्यों का समावेश है और जो समाज में रहने वाले लोगों के मूल्यों और उनके चरित्र को आकार देते हैं, तो किसी भी कोशिश का कोई मतलब नहीं रहता है।

'मंजरी' एक उद्यम है, क्रियाशीलता को शोध आधारित रचना और आलोचना के नजरिये से देखने का जो महिला अधिकारों के साथ–साथ जीवन के हर पलू को इंगित करे। नियमित गैर सरकारी संगठनों और अकादमिक तंत्रों से इतर 'मंजरी' राजनीति और आदर्शवादिता को लांघ कर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सुधारों को सांस्कृतिक संवेदनशीलता के आधार पर मापती है। 'मंजरी' उन तमाम कार्यकर्ताओं, विद्वानों, शिक्षाविदों, पत्रकारों, प्रोफेशनल, गृहणियों और नीति निर्धारकों द्वारा पढ़ी जाएगी जो किसी समस्या के लिए समाधान आधारित नवीन दृष्टि और पृथक सोच रखते हैं। यह पत्रिका अपने पाठकों को जेंडर आधारित मुद्दों को जैविक और सामा. जिक आधार पर परखने की छूट देती है। व्यक्ति और समाज की विचारधारा में जेंडर को लेकर क्या बदलाव आये और उनका क्या असर हुआ, इसकी पूरी पड़ताल करने की आजादी लोगों को होगी। यह पत्रिका एक कोशिश है पड़ताल की प्रवृत्ति को जगाने की ताकि लोग तेजी से बदलते और विविधताओं से भरे समाज में पूरी क्षमता से काम करने को तैयार हो सकें जिसमें महिलाओं के प्रति भेदभाव भी एक अहम मुद्दा होगा। महिला समानता और अधिकारों पर 'मंजरी' के दखल से उन बेशुमार कार्यकर्ताओं, संगठनों और विद्वजनों को फायदा होगा जो दहेज, यौन प्रताड़ना, महिला अधिकारों, महिला आरक्षण, आर्थिक सुधार और अल्पसंख्यक समुदायों के निजी कानूनों में रुचि रखते हैं।

पत्रिका का मकसद

इक्विटी फांडेशन खुद को सुविधाविहीन महिलाओं को उनकी पूर्ण क्षमता से अवगत कराने और समाज में उनके क्रियाशील प्रभुत्व को स्थापित कराने की दिशा में वाहक के तौर पर देखता है। देश के विकास के हर क्षेत्र में महिलाओं की समान भागीदारी की राष्ट्रीय नीति तभी सफल हो पाएगी जब महिलाओं की भूमिका और उनके योगदान को कमतर आंकने वाले संस्थान और विचारों को हतोत्साति किया जाये या उनका पूरी तरह सफाया किया जाय। 'मंजरी' की परिकल्पना समाज और अर्थव्यवस्था में महिलाओं के जीवन और उनके स्तर को प्रभावित करने वाले विचारों के निर्माण, विकास और उनके प्रसार के लिए की गई है। बारहवीं पंचवर्षीय योजना के परिप्रेक्ष्य में समानता संबंधी मुद्दों को इस प्रकार समग्र रूप में देखने की जरूरत है जो असमानता की अंतरवर्गीय विशेषताओं को जाहिर कर सके। समानता पर आधारित 'मंजरी' के ज्यादातर आलेख भिन्न–भिन्न समूहों को निशाने पर रखते हैं जो कुछ हद तक बेहद जरूरी भी है। इसलिए यह पत्रिका कुछ समूहों के कुछ विशेषाधिकारों के पूर्ण निष्कासन और अंतरवर्गीय दृष्टिकोणों के स्थापन के बीच नियंत्रक की भूमिका में होगी जो नीति निर्धारण और योजनाओं के क्रियान्वयन के दौरान असमानता को उसके तमाम स्वरूपों के साथ सामने रखने में कारगर होगी। ऐसे में इसका मकसद लैंगिक भेदभाव के निर्मूलन की ओर वह विवेचनात्मक चर्चा छेड़ने का है जो वर्तमान परिदृश्य में शोधों का एजेंडा तय कर सके और एक बेहतर वैकल्पिक प्रस्ताव का सृजन कर सके। अब तक यह संगठन कार्यशाला, कांफ्रेंस और अन्य सार्वजनिक आयोजनों के जरिये अपनी प्रतिबद्धता दर्शाता रहा है लेकिन अब इस पत्रिका के माध्यम से यह क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय अतिथि लेखकों, जिनमें विद्वजन, अधिवक्ता, सरकार, पत्रकार, फिल्म निर्माता, कवि और सामाजिक कार्यकर्ता हैं, को जोड़ने की कोशिश कर रहा है।

हमारी बात

संरक्षण

पद्मश्री डा. उषा किरण खान
प्रख्यात लेखिका एवं साहित्यकार

मणिकांत ठाकुर
प्रख्यात पत्रकार

प्रो. भारती एस. कुमार
प्रोफेसर (सेवा.) इतिहास, पटना विवि

डा. रेणु रंजन
प्रोफेसर (सेवा.), समाज शास्त्र
पटना विवि

परामर्श

डा. शरद कुमारी
सचिव, बिहार महिला समाज

अंजिता सिन्हा
पत्रकार

डा. मधुरिमा राज
स्वतंत्र लेखिका एवं शोधकर्ता

सुजाता गुप्ता
लेखिका, कवयित्री एवं अनुवादक

संपादकीय

संपत्ति के अधिकार को लेकर 1956 में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम कानून लागू हुआ था। इसे साल 2005 में संशोधित करते हुए बेटियों को पैतृक संपत्ति में बराबरी का भागीदार बनाया गया था। लेकिन इस संशोधन में यह स्पष्ट नहीं था कि हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 के लागू होने से पहले अगर पिता की मृत्यु हो गई होगी तो उन बेटियों को पैतृक संपत्ति में अपना हिस्सा मिलेगा या नहीं। बीते दिनों सुप्रीम कोर्ट ने महिलाओं के संपत्ति के अधिकार को लेकर एक महत्वपूर्ण फैसला सुनाया है। यह फैसला लैंगिक समानता की ओर एक सराहनीय कदम है। अपना फैसला सुनाते समय कोर्ट ने कहा, ''बेटियां भी बेटों की तरह जन्म के साथ पैतृक संपत्ति में बराबरी की हकदार हैं।'' सुप्रीम कोर्ट ने दानम्मा बनाम अमर (2018) के मामले में फैसला सुनाते हुए उन सारे सवालों को स्पष्ट किया जिसके कारण बेटियों को संपत्ति में अपना हिस्सा पाने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था। पैतृक संपत्ति पर अधिकार के हाल ही के फैसले में कोर्ट ने बेटे और बेटियों को बराबरी का हक देते हुए यह भी कहा कि इस बात को ध्यान में रखना होगा कि अधिकार के साथ ही दायित्व भी बेटे और बेटियों में बराबरी का है।

एक बात को समझना बहुत जरूरी है, जहां शादी के बाद बेटियों पर मां–बाप की जिम्मेदारी की बात आती है वहां उनके ससुराल से इसकी सहमति नहीं मिलती है। ससुराल वाले बहु पर अपना पूर्ण अधिकार समझते हैं। जिस समाज में बचपन से ही लड़कियां यह सुनती आई हैं कि बेटियां पराया धन होती हैं, शादी के बाद उनका ससुराल ही उनका सब कुछ होता है, लड़की की डोली मायके से और अर्थी ससुराल से उठती है। इस माहौल में पली–बढ़ी लड़की अपने ससुराल वालों के सामने अपने मां–बाप की जिम्मेदारी उठाने की बात कैसे कर पाएगी।

हमारे समाज की संरचना कुछ ऐसी है जिसमें हिंदू समाज के मुताबिक दहेज बेटियों की संपत्ति का हिस्सा माना जाता है। पैतृक संपत्ति में हिस्सेदारी की बात आते ही भाई इसके खिलाफ विरोध करने लगते हैं और भाइयों के साथ तनावपूर्ण संबंधों के डर से बहनें अपने हिस्से की संपत्ति नहीं लेना चाहती हैं। आज भी संपत्ति में अपना हक मांगने वाली लड़कियां घर तोड़ने वाली औरत के तमगे से नवाजी जाती हैं। कुछ मामलों में महिलाएं अपने हिस्से का दावा करने के लिए अदालत जाने से हिचकिचाती हैं क्योंकि कानून की प्रक्रिया बहुत ही पेचीदा एवं लम्बी होती है।

यूएन वुमन की तरफ से साल 2016 में किए गए अध्ययन के सर्वे के अनुसार 44 फीसद महिलाओं ने माना कि उनके माता–पिता उन्हें अपने जमीन का हिस्सा देने के लिए सहमत नहीं होंगे जबकि 53 फीसद महिलाओं का मानना था कि उनके भाई इस विचार का विरोध करेंगे। जमीन औरतों को बारगेनिंग पावर देता है जिसके जरिये वे समाज में बराबरी के संसाधन और मौके के साथ आगे बढ़ सकती हैं। विधवा, तलाकशुदा और पति से छोड़ी हुई महिलाओं की जिंदगी संसाधन के अभाव में और भी ज्यादा कठिन हो जाती है। संपत्ति पर अधिकार के साथ जो सशक्तिकरण महिलाओं

हमारी बात

को मिलता है वह घरेलू हिंसा को कम करने में भी प्रभावी हो सकता है। इसलिए अब वक्त आ गया है कि महिलाओं को सदियों से चली आ रही प्रथाओं को तोड़ते हुए खुद ही अपने अधिकारों के लिए आगे आना होगा। संपत्ति में हक की मांग करना सबसे पहला कदम होगा जो लैंगिक समानता बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान करेगा।

हालांकि कानून ने बेटियों को संपत्ति में बराबरी का अधिकार तो दे दिया है लेकिन असल जिन्दगी में यह कानून किस हद तक लागू हो पाता है और इसे लागू करने में कौन सी सामाजिक बाधाएं आती हैं, उसे समझने की जरूरत है। स्पष्ट नियम–कानूनों के बावजूद महिलाओं के साथ भेदभाव समाज की कड़वी हकीकत है। इसकी एक बड़ी वजह अधिकारों को लेकर जागरूकता का अभाव है। अगर आप अधिकारों को लेकर सजग और जागरूक हैं तो भेदभाव को खत्म कर सकते हैं। हमारा यह अंक 'वारिस और विरासत' एक कोशिश है अपने पाठकों को पैतृक संपत्ति और महिलाओं के अधिकार के विषय में जानकारी देने की। शायद हमारा यह एक छोटा सा प्रयास महिलाओं को उनके अधिकार और हक के प्रति जागरूक कर पाए।

इस विषय पर प्रसिद्ध नारीवादी कवयित्री और सामाजिक कार्यकर्ता स्वर्गीय कमला भसीन का कहना था कि
"हमें बेटियों को बचाना है, अपनाना है, पढ़ाना है और जायदाद में हिस्सेदार बनाना है। अगर हम अपनी बेटियों को प्यार करते हैं तो लगायें ये नारे और बदलें अपने परिवारों और समाजों की तस्वीर–

"बेटी दिल में
बेटी विल (will) में
न दहेज न महंगी शादी
बेटी को देंगे सम्पत्ति आधी"

नीना श्रीवास्तव

डाटा एवं अन्य स्रोतः तन्वी सुमन

मुख्य संपादक

नीना श्रीवास्तव

संपादक

दीपिका झा

शोध

नीना श्रीवास्तव
दीपिका झा

आवरण चित्र

वरिष्ठ अतिथि कलाकार
अनु प्रिया

लोगो डिजाइन

दीया भारद्वाज

प्रबंधन/व्यवस्था

राहुल कुमार

प्रकाशन

इक्विटी फाउंडेशन

संपर्क

इक्विटी फाउंडेशन
123 ए, पाटलीपुत्र कॉलोनी
पटना, 13
फोन : 0612.2270171

ई–मेल
equityasia@gmail.com
वेबसाइट
www.emanjari.com

थीम पेपर

हिन्दू महिलाओं के पैतृक संपत्ति के अधिकार को सुदृढ़ बनाना होगा

मील का पत्थर हैं जस्टिस ए.के. सिखरी और जस्टिस अशोक भूषण के आदेश

फ्लेविया एग्नेस

(लैंगिक समानता और कानून सुधार के मुद्दों पर महिला आंदोलनों की अगुवाई करने वाली फ्लेविया एग्नेस मुखर महिला अधिकार अधिवक्ता हैं। वे विधिक एवं सांस्कृतिक संसाधन केन्द्र 'मजलिस' की सह–संस्थापक हैं। उनकी आत्मकथा ''माई स्टोरी अवर स्टोरी. ..ऑफ रीबिल्डिंग ब्रोकेन लाइव्स'' एक अत्यंत प्रेरक व महत्वपूर्ण किताब है जिसका अनुवाद कई भाषाओं में किया जा चुका है और चार संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी अन्य प्रमुख किताबें हैं– The Politics of Personal Laws in India (2001) और Women and Law in India: An Omnibus Comprising Law and Gender Inequality, Enslaved Daughters, Hindu Women and Marriage Law (2004, सुधीर चंद्रा और मोन्मयी बसु के साथ)

हिन्दू महिलाओं का पैतृक संपत्ति पर अधिकार एक बहुत ही विवादास्पद मुद्दा रहा है। 1950 के दशक में हिन्दू कोड बिल पर बहस के दौरान, अलग–अलग दलों के नेताओं के कड़े विरोध के कारण, हिन्दू महिलाओं को पैतृक संपत्ति में समान अधिकार नहीं दिया जा सका। उनके अधिकार पिता द्वारा अर्जित संपत्ति तक ही सीमित रहे। बल्कि यह अधिकार भी इतना भ्रामक था कि पिता अपनी वसीयत बना कर बेटियों को अपनी संपत्ति से बेदखल कर सकता था। हिन्दू महिलाओं को उनकी पैतृक संपत्ति में बराबर की हिस्सेदारी का अधिकार 2005 में जाकर प्राप्त हुआ, जो पिछले 50 से अधिक सालों के उनके आंदोलन का परिणाम था।

हालांकि कानून बन जाने के बाद भी भ्रम की स्थिति बनी रही क्योंकि कई उच्च न्यायालयों ने महिलाओं की उनकी पैतृक संपत्ति में अधिकार की मांग को यह मानते हुए खारिज कर दिया कि विवाह के बाद बेटी अपने पिता की संपत्ति में अधिकार खो देती है और यही अवधारणा समाज और अदालत दोनों जगह मान्य है। यही कारण है कि हमें 1 फरवरी, 2018 को दानम्मा बनाम अमर मामले [2018 (1) SCALE 657] में दिए गए जस्टिस ए.के. सिखरी और जस्टिस अशोक भूषण के आदेश का स्वागत करना चाहिए और उसे प्रचारित करना चाहिए, क्योंकि इसने साफ और स्पष्ट शब्दों में पैतृक संपत्ति में हिन्दू महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षित किया है और यह तय किया है कि उनके अधिकार उनकी वैवाहिक स्थिति के बावजूद अक्षुण्ण रहते हैं।

इस फैसले को उस समय उतना महत्व नहीं मिल पाया, जितना उसे मिलना चाहिए था। फिर भी, अभी हम पूरे साल के दौरान जितने महिला समर्थक निर्णयों को देखते हैं, हमें एक बार पीछे जाना चाहिए और इसकी विस्तार से व्याख्या करनी चाहिए, उन भ्रांतियों को दूर करने के लिए जो आज भी प्रचलित हैं और महिलाओं को उनके परिवार की संपत्ति में बराबरी का दावा करने से रोकती हैं।

इस बात से मैं सहमत हूं कि एक विवाहिता के लिए, या किसी भी महिला के लिए अपने परिवार के सदस्यों से अपने अधिकार मांगना आसान नहीं होता है, और फिर अदालती लड़ाई लंबे समय तक भी चल सकती है। फिर भी, जब तक कुछ महिलाएं इस कठिन यात्रा पर नहीं निकलती हैं, इस मुश्किल से प्राप्त की गई जीत पर भ्रम की स्थिति बनी रहेगी और गलत धारणाएं बरकरार रहेंगी।

2005 का संशोधन अधिनियम

इस फैसले ने स्पष्ट किया कि 2005 का संशोधन अधिनियम हिंदू हमवारिसों (संयुक्त संपत्ति धारकों) की बेटियों पर उसी दिन से लागू होता है, जिस दिन से अधिनियम प्रभाव में आया था। उस तारीख से, सभी हिंदू बेटियां अपने भाइयों के साथ हमवा.

रिस बन गई हैं, भले ही वे संशोधन से पहले पैदा हुई हों और इसलिए उन्हें उनके अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है।

मुकदमे में उठाए गए दो मुद्दे

❑ क्या बेटियों को उनके पिता की संपत्ति में उनके हिस्से से केवल इस आधार पर वंचित किया जा सकता है कि उनका जन्म हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 (जिसने पहली बार बेटी को अधिकार प्रदान किया था) के लागू होने से पहले हुआ था?

❑ क्या हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005 के पारित होने के साथ, बेटियां ''जन्म से'' ही ''पुत्र की तरह अपने स्वयं के अधिकार में'' हमवारिस बन गई हैं और इसलिए, बेटे की तरह ही बराबर के हिस्से की हकदार हैं?

क्या संपत्ति का अधिकार 9 सितंबर, 2005 के बाद पैदा हुई बेटियों तक सीमित है, जब संशोधन अधिनियम लागू हुआ था, इस मुद्दे पर सुप्रीम कोर्ट ने प्रकाश बनाम फूलवती [(2016) 2 SCC 36] मामले में पहले ही फैसला कर दिया था, जिसमें यह कहा गया था कि संशोधन के तहत अधिकार 9 सितंबर, 2005 को जीवित हमवारिसों की जीवित बेटियों पर लागू होते हैं, भले ही ऐसी बेटियों का जन्म कभी भी हुआ हो। हालांकि, अगर संपत्ति को 20 दिसंबर, 2004 से पहले ही विभाजित कर दिया गया था, तो यह अप्रभावित रहेगा और संशोधित अधिनियम के अनुसार संपत्ति के पुनर्वितरण का मुद्दा नहीं उठता, क्योंकि अधिनियम संभावित है और पूर्वव्यापी नहीं है।

अपने फैसले में कोर्ट ने कहा कि एचयूएफ संपत्ति से जुड़े कानून में अभूतपूर्व बदलाव किए गए हैं, जो पैतृक संपत्ति में महिलाओं की बराबरी की हिस्सेदारी की बढ़ती मांगों को देखते हुए किए गए हैं। ये बदलाव एक बेटी को लेकर व्याप्त पूर्वाग्रहों और अक्षमताओं को दूर करने के लिए समानता के मापदंडों पर किए गए हैं। अदालत ने साफ किया कि हमवारिसी में जन्म लेना एक तथ्य है जो अधिकार का निर्माण करता है। इसलिए, 2005 में जिस दिन कानून प्रभाव में आया, उस दिन से जीवित बेटियां जन्म से ही हमवारिस बन जाती हैं। निर्णय में आगे यह स्पष्ट किया गया कि हमवारिस की मृत्यु हो जाने की स्थिति में भी, यदि जीवित बचे लोगों के दावों का निपटान नहीं किया गया है, तो मामले पर फैसला लेते समय कोर्ट इस बात का संज्ञान लेने के लिए बाध्य है कि बेटियां संपत्ति की बराबर की हिस्सेदार हो गई हैं।

मामले के तथ्य

2001 में हमवारिस, गुरुलिंगप्पा की मृत्यु के एक साल बाद उनके पोते (अमर) द्वारा एक बंटवारे का मुकदमा दायर किया गया था, जिसमें उन्होंने संपत्ति के एक/पांचवें हिस्से का दावा किया था। गुरुलिंगप्पा अपने पीछे दो बेटों (अरुण कुमार और विजय) और दो बेटियां (दानम्मा और महानंदा) को छोड़ गए थे। अमर अरुण कुमार का पुत्र था। उनकी दो बहनें थीं– शीतल और त्रिवेणी।

गुरुलिंगप्पा की पत्नी सुमित्रा, उनके पिता अरुण कुमार और अमर की बहनों ने उनके दावे का विरोध नहीं किया। लेकिन दो बुआओं– दानम्मा और महानंदा– ने अपने हिस्से का दावा किया और चाचा विजय ने संपत्ति के आधे हिस्से का दावा किया।

2007 में मुकदमे का फैसला सुनाया गया, उस समय तक उनकी दादी सुमित्रा और उनके पिता अरुण कुमार की मृत्यु हो

थीम पेपर

चुकी थी। इसलिए, ट्रायल कोर्ट ने आधी संपत्ति विजय को दे दी और बाकी संपत्ति अमर, उसकी मां और उसकी बहनों को समान रूप से दे दी गई। दोनों बुआओं को इस आधार पर किसी भी हिस्से से वंचित कर दिया गया था कि वे हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के लागू होने से पहले पैदा हुई थीं। चूंकि उस समय तक बेटियां पारिवारिक संपत्ति में किसी भी हिस्से का दावा नहीं कर सकती थीं, इसलिए अदालत ने कहा कि वे हिस्से की हकदार नहीं हैं।

दोनों बुआओं ने कर्नाटक उच्च न्यायालय में अपील की जिसने निचली अदालत के आदेश को बरकरार रखा। उनकी ओर से दायर पुनर्विचार याचिका भी खारिज कर दी गई। लेकिन धैर्य और दृढ़ संकल्प के साथ, उन्होंने 2018 में अपने पक्ष में अंतिम फैसले के लिए सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया।

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि 2005 का संशोधन अधिनियम लागू होने के साथ ही हमवारिसों की बेटियां भी दो भाइयों (अरुण कुमार और विजय) के साथ, हमवारिस बन गईं, और इसलिए, वे एक/पां. चवें हिस्से (उनके लिए एक हिस्सा) की हकदार बन गई थीं (माँ सुमित्रा और चारों भाई–बहनों का एक–एक हिस्सा)। अमर का हिस्सा 1/25 होगा। यह गणना इस तथ्य के आधार पर की गई थी कि वह अपने माता–पिता और दो बहनों के साथ बराबर का हिस्सेदार बन गया था।

पक्षपात अब भी कायम है

यह वाकई चौंकाने वाला है कि निचली अदालत का 2007 में सुनाया गया फैसला और 2012 में सुनाया गया कर्नाटक उच्च न्यायालय का फैसला हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के तहत बदली हुई स्थिति पर ध्यान देने में विफल रहा। संशोधित अधिनियम की शब्दावली में जो अस्पष्टता हैं, उनकी बजाय, हमारे समाज और अदालतों दोनों में महिलाओं के खिलाफ जड़ें जमाए हुए पूर्वाग्रह हैं जो इस स्थिति के लिए जिम्मेदार हैं। यह माना जाता है कि शादी के बाद, एक बेटी पैतृक संपत्ति पर अपना अधिकार खो देती है क्योंकि उसे दहेज दिया जाता है और "घर से दूर भेज दिया जाता है"।

न्यायमूर्ति सिखरी द्वारा लिखा गया निर्णय शास्त्रीय हिंदू कानून में बेटियों के खिलाफ व्याप्त भेदभाव को दूर करने के लिए हिंदू कानून इतने वर्षों में कैसे विकसित हुआ है, इस पर न्यायविद रोसको पाउंड के एक प्रसिद्ध उद्धरण पर निर्भर करता है: "हिंदू उत्तरा. धिकार अधिनियम 1956 में जो मूलभूत परिवर्तन 2005 में इसमें संशोधन के द्वारा लाए गए, वे संभवतः रोसको पाउंड के अमर शब्दों का एक अहसास है जो उनके प्रसिद्ध ग्रंथ, द आइडियल एलिमेंट इन लॉ में प्रकट होता है, कि 'कानून को स्थिर होना चाहिए और फिर भी यह स्थिर नहीं रह सकता है। इसलिए कानून के बारे में सभी विचारों ने स्थिरता की आवश्यकता और परिवर्तन की जरूरत की परस्पर विरोधी माँगों के समाधान के लिए संघर्ष किया।"

www.tribuneindia.com में पूर्व प्रकाशित आलेख का हिन्दी अनुवाद।

मुस्लिम महिलाएं अधिक सक्षम

जब हम ऐतिहासिक रूप से धार्मिक क़ानूनों के तहत महिलाओं के सम्पत्ति अधिकारों की जांच करते हैं तो ज्ञात होता है कि मुस्लिम महिलाएं अन्य धर्मों की महिलाओं की तुलना में अधिक सक्षम थीं। यहां तक कि उन्नीसवीं सदी में अंग्रेज़ी महिलाओं की तुलना में भी उनकी स्थिति अधिक बेहतर थी। इस सन्दर्भ में 1867 में प्रिवि परिषद (प्रिवि परिषद राष्ट्र अध्यक्ष को सलाह देने वाली एक निजी समिति होती है जो गुप्त रूप से काम करती है) द्वारा एक महत्वपूर्ण फ़ैसला दिया गया। मुंशी बजलूर रूहैम शमशुन्निसा बेगम इसके महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर प्रकाश डालती हैं। यह मामला एक मुस्लिम महिला का था, जिसके पति ने उसकी सहमति के बिना शादी के समय लाई गई सम्पत्ति और कीमती चीजों को बर्बाद कर दिया। महिला ने उसको पुनः प्राप्त करने के लिए मुकदमा किया। प्रिवि परिषद ने फ़ैसला उसके हक़ में हो इसके लिए एक मसौदा तैयार किया– "मुसलमान और हिन्दू औरतों के अधिकारों के बीच अन्तर को स्पष्ट करना चाहिए, अर्थात सम्पत्ति के अधिकारों के सभी तथ्यों के सन्दर्भ में। इसमें कोई शक नहीं है कि मुसलमान औरतें विवाह के बाद भी सम्पत्ति अधिकारों पर अपना प्रभुत्व रखती हैं और अपने पति के स्वामित्व नियंत्रण से मुक्त होती हैं। मुसलमान क़ानून, औरतों के लिए हिन्दू क़ानून से कहीं ज़्यादा अनुकूल है, जो महिलाओं की दूसरों पर निर्भरता पर ज़ोर नहीं देता।" इसके अतिरिक्त शादी के समय मांगी गई मेहर राशि, जो दुल्हन का पति शादी के समय उसे देता है, उस पर महिला का एकल स्वामित्व होता है। कुरान में भी सम्पत्ति का एक निश्चित हिस्सा महिला के लिए निर्धारित किया गया है। यद्यपि यह पुरुष के बराबर नहीं था और न ही यह समानता के आधार पर था बल्कि यह समता के आधार पर निर्धारित हुआ। एक तथ्य यह भी है कि कुरान के अनुसार महिलाओं का सम्पत्ति अधिकार सातवीं सदी में स्थापित हुआ। हालांकि औपनिवेशक काल में महिलाओं के सम्पत्ति अधिकार से जुड़े कई मुकदमे दायर किए जाने का दावा किया गया। दूसरी ओर यह भी कहा गया कि सम्पत्ति अधिकार में परिवर्तन के बाद भी औपनिवेशिक न्यायाधीशों ने बेटियों को पैतृक सम्पत्ति से वंचित रखने की प्रथाओं को कायम रखा और धीरे–धीरे महिलाओं ने कुरान में लिखी सम्पत्ति का अधिकार खो दिया। ''हम सबला'' से साभार

श्रोत

smilefoundation
hindi.feminisminindia.com
streekaal.com
hindi.ipleaders.in
www.99acres.com
hindi.livelaw.in
housing.com
हम सबला

अनु प्रिया (कलाकार/लेखिका)

सुपौल बिहार में जन्मीं अनु प्रिया जी के साठ से अधिक किताबों के आवरण एवं पत्र–पत्रिकाओं में रेखाचित्र प्रकाशित हो चुके हैं। साहित्य अकादमी, राजकमल प्रकाशन, वाणी प्रकाशन, अल्टरनोट प्रकाशन, अगोर प्रकाशन, प्रकाशन विभाग आदि से किताबों के आवरण पर निरंतर इनके द्वारा बनाये गए चित्र का प्रकाशन होता रहता है।

अनुक्रमणिका

कविताः यूं ही.....

संकल्पना .....

हमारी बात : संपादकीय .....

थीम पेपर: हिन्दू महिलाओं के पैतृक संपत्ति के अधिकार को सुदृढ़ बनाना होगा .....

विरासत क्या है, कौन है वारिस! 1

दिल में बेटी और विल में बेटी 4

हिन्दू स्त्रियों के संपत्ति अधिकार 7

जीरो 11

अदृश्य महिला किसान 12

पैतृक संपत्ति, कृषि भूमि और स्त्रियां 14

विधवाओं को बेघर कर गया कोरोना 17

संपत्ति अधिकारों की मुखर अधिवक्ता 20

मैरी रॉयः जिन्होंने बेटियों को दिलाया हक 21

दिव्यांग बता पति ने छोड़ा, संघर्ष से पाया हक 22

लड़ी लड़ाई फिर जीत पाई 23

बहनों को मरा बताकर संपत्ति हड़प ली..... 24

बढ़ रहे संपत्ति से बेदखली के मामले 25

तलाक के बाद संपत्ति में पत्नी के अधिकार 26

दूसरी पत्नी और बच्चों के अधिकार 28

शादी करने से ही नहीं मिल जाता हक..... 29

जानकारी हो पूरी

विश्व भर के अधिकतर कानूनों की तरह भारतीय कानून भी वारिस की अवधारणा को मान्यता देता है। उत्तराधिकारियों में वे व्यक्ति शामिल होते हैं, जो अपने पूर्वजों से कानूनी तौर पर संपत्ति प्राप्त करने के हकदार होते हैं।

पैतृक संपत्ति क्या है?

हिंदू कानून के तहत संपत्ति या तो स्वयं अर्जित संपत्ति होगी या पैतृक संपत्ति होगी। दोनों प्रकार की संपत्ति के बीच का अंतर स्वयं स्पष्ट है। जो संपत्ति मालिक ने अपने संसाधनों का उपयोग करके अर्जित की है, वह उसकी स्वयं अर्जित संपत्ति है, जबकि जो संपत्ति उसे अपने परिवार के सदस्यों से विरासत में मिली है वह पैतृक संपत्ति है।

दोनों प्रकार की संपत्तियों के बीच अंतर को काफी जटिल बनाने वाला तथ्य यह है कि स्वयं अर्जित संपत्ति एक समय के बाद पैतृक संपत्ति बन जाती है। इसका उल्टा भी सही है– पैतृक संपत्ति भी स्वयं अर्जित संपत्ति बन सकती है। जब कोई पैतृक संपत्ति संयुक्त हिंदू परिवार के सदस्यों में बांट दी जाती है, तो वह परिवार के सदस्य के हाथों में स्वयं अर्जित संपत्ति बन जाती है। इसी प्रकार किसी व्यक्ति के परदादा की स्वयं अर्जित और अविभाजित संपत्ति आखिरकार पैतृक संपत्ति बन जाती है।

पैतृक संपत्ति के कानूनी वारिस कौन होते हैं?

वारिस वो व्यक्ति है जिसे कानूनी रूप से उन पूर्वजों की संपत्ति विरासत के रूप में प्राप्त करने का अधिकार होता है, जो बिना वसीयत छोड़े स्वर्गवासी हो गए (जिन्हें निर्वसीयत के रूप में जाना जाता है)। ऐसे संपत्ति के मालिक की मृत्यु के बाद संपत्ति के उत्तराधिकार और अन्य दावों से संबंधित मामलों को उनके कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा उठाए जाने की आवश्यकता होगी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वारिस की अवधारणा अलग–अलग धर्मों में भिन्न है। इसी वजह से मृत व्यक्ति की संपत्ति में उनके संपत्ति के अधिकार भी उनके धर्म के अनुसार भिन्न हो सकते हैं। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम सभी हिंदुओं, बौद्धों, जैन और सिखों पर लागू होता है। ये उन पर भी लागू होता है, जो इनमें से किसी भी धर्म में कन्वर्ट हुए हैं या फिर मां–बाप की शादी के बिना पैदा हुए हैं। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम भारतीय मुस्लिमों और ईसाइयों पर लागू नहीं होता क्योंकि संपत्ति उनके कानूनी उत्तराधिकारियों को विरासत में कैसे मिलेगी, इसके लिए उनके निजी कानून हैं।

क्या होती है विरासत?

उत्तराधिकार शब्द का इस्तेमाल विशेष रूप से उत्तराधिकार के संदर्भ में किया जाता है। एक शख्स की मौत पर उसकी संपत्ति, टाइटल, लोन और दायित्व वारिस के सकते हैं, लेकिन विभिन्न सोसाइटीज विरासत को लेकर अलग–अलग व्यवहार करते हैं। वास्तविक व अचल संपत्ति को अक्सर विरासत माना जाता है।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम तब लागू होता है, जब किसी हिंदू की बिना वसीयत छोड़े ही मौत हो जाती है। इसके बाद उत्तराधिकार कानून के नियमों पर ही निर्भर करता है। एक हिंदू व्यक्ति की मौत के मामले में, उसकी संपत्ति वरीयता क्रम में आगे दी जाती है।

क्या पैतृक संपत्ति किसी को उपहार में दी जा सकती है?

पैतृक संपत्ति को उपहार यानी गिफ्ट में दिया जा सकता है, लेकिन इसकी 3 शर्तें हैं–

1) इसे किसी कानूनी आवश्यकता के तहत दिया जा रहा हो
2) इससे पारिवारिक संपत्ति का लाभ हो रहा हो
3) परिवार के सभी हमवारिस की सहमति से दिया जा रहा हो

जानकारी हो पूरी

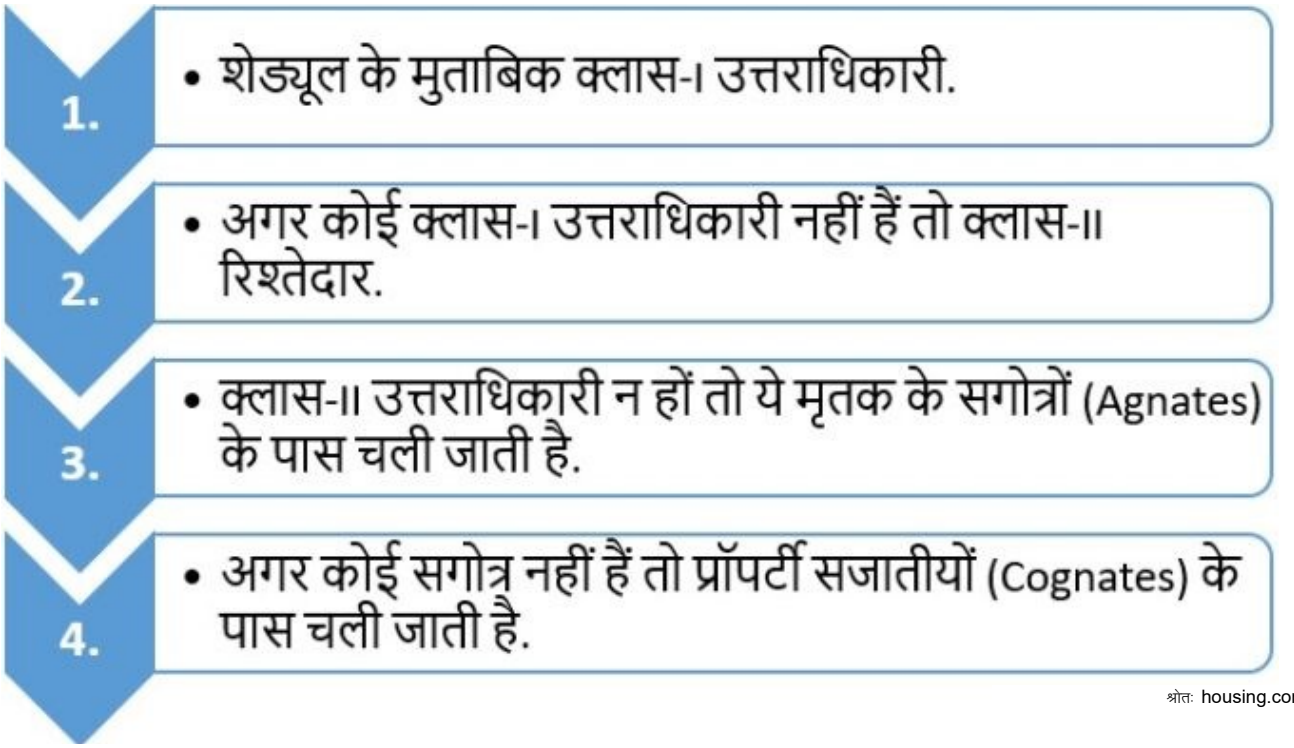

श्रोतः housing.com

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि कर्ता 'पवित्र उद्देश्यों' जैसे दान और धार्मिक कार्यों के लिए अपनी संपत्ति को उपहार में देने के लिए पूरी तरह से स्वतंत्र है। हालांकि, शीर्ष अदालत ने फैसला सुनाते हुए ये स्पष्ट किया कि 'प्यार और स्नेह' में दिया हुआ उपहार, दान नहीं होता है।

एकल महिलाओं को विरासत में मिली संपत्ति का क्या होता है?

सुप्रीम कोर्ट ने फैसला सुनाया था कि ऐसी महिलाओं की संपत्ति जो अपने पीछे कोई संतान नहीं छोड़ती है और बिना वसीयत छोड़े ही मर जाती है, उनकी संपत्ति अपने स्रोत यानी जहाँ से उन्हें ये संपत्ति मिली थी उसके पास वापस चली जाती है। "यदि एक हिंदू महिला बिना किसी बच्चे को छोड़े मर जाती है, तो उसके पिता या माता से विरासत में मिली संपत्ति उसके पिता के उत्तराधिकारियों को मिल जाएगी, जबकि उसके पति या ससुर से विरासत में मिली संपत्ति पति या ससुर के वारिसों के पास जाएगी।" कोर्ट ने एस अब्दुल नजीर और कृष्णा मुरारी, जेजे मामले में अपना फैसला सुनाते हुए कहा था।

उन विवाहित महिलाओं के मामले में जो अपने पति और बच्चों को पीछे छोड़ कर मर जाती हैं, उनकी संपत्ति, जिसमें उनके माता–पिता से विरासत में मिली संपत्ति भी शामिल है, उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 15 (1) (ए) के मुताबिक उनके पति और उनके बच्चों को मिल जाएगी।

बेटे की प्रॉपर्टी में मां के अधिकार

एक मां अपने मृत बेटे की संपत्ति की कानूनी वारिस होती है। अगर कोई शख्स अपनी मां, पत्नी और बच्चों को छोड़कर गुजर गया है, तो उसकी संपत्ति पर सभी का समान अधिकार होता है। ध्यान दें कि अगर मां बिना वसीयत बनाए गुजर जाती है, तो उसके बेटे की संपत्ति में उसका हिस्सा उसके कानूनी उत्तराधिकारियों के पास चला जाएगा, जिसमें अन्य बच्चे भी शामिल हैं।

गोद लिए हुए बच्चों के प्रॉपर्टी में अधिकार

गोद लिया हुआ बच्चा भी क्लास–1 उत्तराधिकारी होता है और उसे भी वही सारे अधिकार मिलते हैं, जो एक जैविक बच्चे को मिलते हैं। अगर पिता को किसी अपराध के कारण प्रॉपर्टी के उत्तराधिकारी होने से अयोग्य घोषित कर दिया गया था तो एक गोद लिया बच्चा अपने दत्तक पिता की संपत्ति के लिए दावा नहीं कर सकता है। अगर पिता ने कोई और धर्म अपना लिया है और गोद लिया हुआ बच्चा भी उसी धर्म का पालन कर रहा है, तो भी इस मामले में, गोद लिया बच्चा पैतृक संपत्ति हासिल नहीं कर सकता है।

नवंबर 2022 को, कर्नाटक हाईकोर्ट ने एक फैसला सुनाया कि गोद लिए गए बच्चे के अधिकार स्वयं के द्वारा पैदा किए गए बच्चे के बराबर ही हैं। अगर उनके माता या पिता का निधन हो जाता है और अनुकंपा के आधार पर नौकरी की जरूरत

पड़ती है, तो इसके लिए अगर बच्चा गोद लिया ही क्यों न हो, उसे नौकरी पाने के समान अधिकार होंगे। कर्नाटक हाईकोर्ट की धारवाड़ बेंच ने कहा, "एक बेटा, बेटा ही है और एक बेटी, बेटी ही है, फिर चाहे गोद लिया या ली गई हो, अगर इनमें अंतर करना ही होता, तो फिर गोद लेने का मतलब ही क्या हुआ।"

छोड़ी गई पहली पत्नी के प्रॉपर्टी में अधिकार

मान लीजिए कि कोई हिंदू अपनी पत्नी को बिना तलाक दिए छोड़ देता है और दूसरी शादी कर लेता है। इस मामले में, उनकी पहली शादी कानून की ओर से रद्द नहीं की गई है और पहली पत्नी और उनके बच्चे कानूनी उत्तराधिकारी हैं। अगर दोनों का तलाक हो चुका है तो पहली पत्नी प्रॉपर्टी में कोई दावा नहीं कर सकती। लेकिन उसकी जो चीजें हैं, वो उसी की रहेंगी। वहीं, अगर पति और पत्नी ने प्रॉपर्टी की खरीद में योगदान दिया है तो तलाक में दोनों के मौद्रिक योगदान के प्रतिशत का जिक्र होना जरूरी है।

दूसरी पत्नी के प्रॉपर्टी में अधिकार

दूसरी पत्नी के पास पति की संपत्ति में पूरा अधिकार होता है। बशर्ते पति की पहली पत्नी का फिर से शादी करने से पहले ही निधन या तलाक हो गया हो। उसके बच्चों का भी पिता के हिस्से में पहली पत्नी से हुए बच्चों की तरह समान अधिकार हैं। अगर दूसरी शादी कानूनी नहीं है तो न तो दूसरी पत्नी और न ही उसके बच्चों को पति की पैतृक संपत्ति में कानूनी हक मिलेगा।

धर्मांतरण का संपत्ति का अधिकार पर प्रभाव

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के मुताबिक किसी शख्स ने अगर दूसरा धर्म अपना लिया है, तब भी वह प्रॉपर्टी विरासत में हासिल कर सकता है। अगर कोई शख्स अपना धर्म बदलता है तो भारतीय कानून उसे प्रॉपर्टी विरासत में हासिल करने से रोकता नहीं है। जाति विकलांग निष्कासन अधिनियम कहता है कि जिसने भी अपने धर्म का त्याग किया है, उसे प्रॉपर्टी विरासत में मिल सकती है, लेकिन कन्वर्ट होने वाले के वारिस समान अधिकारों का फायदा नहीं उठा पाते हैं। अगर बेटा या बेटी हिंदू धर्म के अलावा किसी अन्य धर्म का पालन करते हैं, तो उन्हें पैतृक संपत्ति विरासत में देने से अयोग्य ठहराया जा सकता है।

मृतक पत्नी की प्रॉपर्टी में पुरुष के अधिकार

पत्नी के जीवित रहते हुए पति के उसकी प्रॉपर्टी में कोई अधिकार नहीं होते। अगर पत्नी का देहांत हो जाता है तो प्रॉपर्टी शेयर पति और बच्चों में बंट जाएंगे। कोलकाता के वकील देवज्योति बरमन कहते हैं, "अगर पत्नी को अपने जीवनकाल में हिस्सा मिल जाता है तो पति विरासत में उसे हासिल कर सकता है। अगर उसे अपने जीवनकाल में अपने माता–पिता या पूर्वजों से विरासत में प्रॉपर्टी नहीं मिली है, तो पति यह दावा नहीं कर सकता है।" अगर किसी शख्स ने अपनी पत्नी के नाम पर अपने स्वयं के पैसों से संपत्ति खरीदी है, तो वह अपनी मौत के बाद भी स्वामित्व को बनाए रख सकता है।

सौतेले बच्चों का संपत्ति पर अधिकार

सौतेले बच्चे वे होते हैं, जहां एक बच्चा दूसरी पत्नी/साथी के साथ पिता से पैदा होता है और दूसरा बच्चा दूसरे पति/साथी के साथ पत्नी से पैदा होता है। संक्षिप्त में, जहां एक पैरेंट समान होता है (पुनर्विवाह या तलाक के मामले में) तो बच्चा उस व्यक्ति के करीब होता है, जिससे वह प्रॉपर्टी विरासत में पा रहा है. ऐसे में उसे ही तवज्जो दी जाएगी। उदाहरण के तौर पर अगर अभिषेक भावना से शादी करता है और चंदन अभिषेक की पहली पत्नी का बेटा है। देवेंद्र भावना के पहले पति का बेटा है तो अगर अभिषेक की प्रॉपर्टी का बंटवारा होगा, तो तवज्जो चंदन को दी जाएगी।

लिव–इन कपल्स और उनके बच्चों के प्रॉपर्टी के अधिकार

2015 में सुप्रीम कोर्ट ने फैसला सुनाया कि लंबे समय तक घर में साथी की तरह रहने वाले जोड़ों को विवाहित माना जाएगा। भारत में कोई भी धर्म लिव–इन को कानूनी नहीं मानता, लेकिन कानून कुछ राहत देता है। क्रिमिनल प्रोसिजर कोड के सेक्शन 125, के तहत, लिव–इन रिलेशनशिप में महिलाएं कानूनी अधिकारों और गुजाराभत्ता की हकदार हैं। लिव–इन रिलेशनशिप से पैदा हुए बच्चे हिंदू विवाह अधिनियम धारा 16 के अनुसार माता–पिता की खुद कमाई हुई संपत्ति के भी हकदार हैं। बच्चे भी गुजारा–भत्ता मांग सकते हैं। कोर्ट ने अपने फैसले में कहा कि वह 'आया और गया' वाले रिश्तों को लिव–इन रिलेशनशिप नहीं मानता। नियम तभी माने जाएंगे, जब दोनों पार्टनर्स लंबे समय से साथ रह रहे हैं।

अविवाहित मां और बच्चे के अधिकार

इसे लेकर फिलहाल कोई स्पष्ट नियम नहीं है कि किसी अविवाहित जोड़ा, जिनके बच्चे हैं, उन्हें अपना हिस्सा कैसे मिलेगा अगर माता–पिता के बीच कस्टडी को लेकर लड़ाई है। अगर माता–पिता एक ही धर्म के हैं तो उनके पर्सनल लॉ पर विचार किया जाएगा। अगर वे एक धर्म के नहीं हैं तो छोटे बच्चों से जवाब मांगा जाएगा और बच्चे के काउंसिलिंग कराई जाएगी।

आह्वान

दिल में बेटी और विल में बेटी

कमला भसीन

(1970 से लेकर अपने अंतिम दिनों तक मानव अधिकारों, स्त्री समानता, सतत विकास जैसे मुद्दों पर काम करती रहीं हम सबकी कमला दी।)

लड़कियों और औरतों को कमजोर, डरपोक, अपवित्र पर निर्भर बताने और बनाने के लिए पितृसत्ता बहुत चालें चलती रही है। पितृसत्ता की एक बहुत ही घातक चाल और साजिश है कि बेटियों को पराया धन माना और कहा जाये, उन्हें बोझ माना जाये। उनके पैदा होने तक को अपशकुन और दुःख की खबर माना जाता है। आजीवन उनके साथ भेदभाव किया जाता है। वयस्क होने पर परिवार की सम्पत्ति नहीं दी जाती। लड़कियों का अपना नाम तक नहीं होता। शादी से पहले पिता का नाम और पिता जब चाहें 'कन्यादान' करके गंगा नहा लें। शादी के बाद बेटी अपने नए मालिक, पति, स्वामी, मजाजी खुदा की जायदाद और दासी हो जाये। नये मालिक का नाम, घर, तौर–तरीके और परिवार अपनाने को मजबूर।

अगर बेटी का अपने परिवार की सम्पत्ति पर कोई अधिकार न हो और न ही स्वनिर्भर होने, खुद कमाकर खाने और रहने के हुनर उन्हें सिखाए जायें तो हर लड़की के लिए शादी जरूरी हो जाती है। इस सबके चलते लड़कियों की जड़ें नहीं बन पातीं। उनमें आत्मविश्वास, आत्मसम्मान, हिम्मत, हौसला पनप ही नहीं पाता। बिना जड़ों की, परजीवी लताएं जीने और खड़े होने के लिये पतिरूपी पेड़ ढूंढ़ती रहतीं हैं। सदा दूसरों पर आश्रित। किसी न किसी मर्द के सहारे के बिना वे खड़ी नहीं हो सकतीं, जी नहीं सकतीं। मर्दों के हुकुम बजाने को मजबूर, स्वराज, स्वतंत्रता,

आजादी का वे सोच भी नहीं सकतीं।

निजी सम्पत्ति में पितृसत्ता की जड़ें

चूँकि लड़कियों और औरतों की अपनी सम्पत्ति नहीं होती, वे खुद औरों की सम्पत्ति बनकर रह जाती हैं। निजी सम्पत्ति और पितृसत्ता का बहुत ही पुराना और पेचीदा रिश्ता है। साम्यवाद के जन्मदाता कार्ल मार्क्स व ऐंगल्स के अनुसार पितृसत्ता की जड़ें निजी सम्पत्ति में हैं। उनका मानना था कि कई हजार साल पहले, सभ्यता के जन्म से पूर्व जब पूरी धरती सभी इंसानों की थी और सभी बच्चों का पालन समूह किया करते थे, तब पितृसत्ता, विवाह और परिवार नहीं थे। जब इंसानों ने प्रकृति पर नियंत्रण शुरू किया, जमीन पर दावा करना शुरू किया, जानवर पाले और दास बनाये तब यह सवाल उठा कि उनके मरने के बाद यह सम्पत्ति किसकी होगी? इस सवाल का जवाब ही पितृसत्ता और वर्ग व्यवस्था का आधार बना। पुरुषों को पता ही नहीं होता कि उनके बच्चे कौन हैं। यह सिर्फ माँ को पता होता है। पुरुषों को तभी पता लग सकता है जब वे औरतों को बंदी बना लें। कोई और पुरुष उनके साथ यौन संबंध न बनाएं। निजी सम्पत्ति के कारण ही पितृसत्ता शुरू हुई। जरा गौर से सोचिये, क्या फर्क है उस प्राचीन आदमी और आज के समाज की सोच में? आज भी बेटी को अपने ही घर में पराये घर की अमानत की तरह पाला जाता है।

कानूनी अधिकार

भले ही हमें अपने आस–पास देखकर ऐसा प्रतीत न हो, पर भारत के संविधान ने महिलाओं को समानता का पूरा हक दिया है। हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) नियम 2005 के अंतर्गत हिन्दू (एवं सिक्ख, बौद्ध और जैन) बेटियों का पारिवारिक सम्पत्ति पर उतना ही अधिकार है जितना बेटों का। इसके अलावा संयुक्त परिवार में भी सम्पत्ति पर बेटियों के अधिकार बेटों के बराबर हैं। साल 2005 के पूर्व शादीशुदा महिलाओं का अपने मायके में (कानूनी रूप से) निवास अधिकार भी नहीं था। कानून भी महिलाओं का असल घर ससुराल को ही मानता था। पर साल 2005 में इसको बदला गया और शादी के बाद भी बेटियों को मायके की संपत्ति पर बराबर के अधिकार दिए गए। माँ के घर वापस जाने का यह अधिकार विवाह में घरेलू हिंसा से शोषित औरतों के लिए राहत के रूप में आया। बीना अग्रवाल (जिनके नेतृत्व में 2005 में कानून बदलने का अभियान चला) ने केरल में एक शोध किया जिसमें यह सामने आया कि सम्पत्तिहीन महिलाओं में से 49 फीसद महिलाएं घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं और सम्पत्तिवान महिलाओं में ये आंकड़ा सिर्फ 6% है। इससे यह साबित होता है कि संपत्ति पर अधिकार न केवल महिलाओं को एक अपमानजनक और हिंसात्मक विवाह छोड़ने का विकल्प देता है बल्कि उनपर होती हिंसा पर रोक भी लगाता है।

समस्या एक, रूप अनेक

यह मुद्दा विभिन्न रूपों में हर वर्ग, जाति और धर्म की महिलाओं को ग्रसित करता है। आदिवासी समुदाय की औरतों के लिए जंगल ही जीविका का स्रोत है और कानून इन्हें वह अधिकार देता भी है पर विकास के नाम पर सरकारें जंगलों की जमीन पूंजीवादी कम्पनियों को बेच रहीं हैं।

विधवा महिलाओं का हाल तो सबसे दयनीय है। उनके पास भी पति की सम्पत्ति पर अधिकार है पर ज्यादातर औरतों को यह पता ही नहीं होता। पता होने पर भी परिवार में निंदा के भय से वे चुप रहती हैं और पुरुष रिश्तेदारों की मेहरबानी पर सारा जीवन काटती हैं। आजकल कई प्रदेशों की सरकारें महिलाओं के नाम पर योजनाएं चला रही हैं जैसे कि झारखण्ड में महिला के नाम से संपत्ति खरीदने पर पंजीकरण शुल्क 1 रुपया हो गया है। मगर ज्यादातर इन योजनाओं का फायदा महिलाओं तक पहुँचता ही नहीं है। उस जमीन पर उनका न तो नियंत्रण होता है और न ही उन्हें उस भूमि से हुई कमाई का प्रत्यक्ष लाभ होता है। उनका नाम सिर्फ टैक्स बचाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

समाज में महिलाओं का एक खंड ऐसा भी है जिन्हें अभी भी कानूनी रूप से बराबरी हासिल नहीं है, जैसे मुसलमान औरतें। इस्लाम वह पहला धर्म था जिसने महिलाओं को तब अधिकार दिये जब किसी और धर्म ने नहीं दिये। आज शरीयत के हिसाब से बेटियों के पास सम्पत्ति पर अधिकार तो हैं पर बेटों के बराबर नहीं। समस्या यह भी है कि जहाँ कानून अधिकार देता भी है तो समाज स्वीकार नहीं करता। हिन्दू लड़कियों को दहेज देकर विदा कर दिया जाता है। जो बेटी हिम्मत कर अपना हिस्सा मांग भी ले तो उसे बुरा–भला कहा जाता है, समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है, समझा जाता है कि लड़की ने परिवार की नाक कटा दी।

संपत्ति स्त्री की भी

दो साल पहले, NDTV की एक पत्रकार राधिका बोर्डिया ने हमें एक आश्चर्यचकित करने वाली बात बताई। अपनी एक कहानी के लिए वे कुछ युवतियाँ ढूंढ रहीं थीं जो कैमरे के सामने यह बतायें कि उनके माता–पिता ने उन्हें पारिवारिक संपत्ति में हिस्सा दिया या नहीं दिया। ताज्जुब की बात यह थी कि पूरे दिल्ली में उन्हें एक भी ऐसी माहिला नहीं मिली। महिला आंदोलन के लम्बे संघर्ष और उससे मिली प्रगति के बाद भी आज की पढ़ी–लिखी, युवतियाँ सम्पत्ति पर अपने अधिकार के बारे में खुलकर बात करने से कतराएं यह जितनी आश्चर्य की बात है उतनी ही निराशाजनक भी है। इस बातचीत ने हमारे मन में सम्पत्ति पर महिलाओं के अधिकार के लिए एक अभियान के बीज बोये। जागोरी व एक्शन एड के साथ मिलकर संगत ने मई, 2017 में एक दो–दिवसीय सम्मलेन का आयोजन किया जिसमें इस मुद्दे पर काम करने वाले 60 शिक्षाविद,

आह्वान

सामाजिक कार्यकर्ता, वकील और डिजिटल मीडिया के प्रतिनिधि शामिल हुए। दो दिन तक हमने साथ बैठकर महिलाओं के सम्पत्ति पर अधिकार के बारे में जमकर बातें कीं, एक–दूसरे के काम से सीखा और इस काम को साथ मिलकर किस तरह बढ़ाया जाए इस पर विचार किया। इसी सम्मलेन में जन्म हुआ हमारे सामूहिक अभियान का ''Property For Her जायदाद औरतों की भी, सम्पत्ति स्त्री की भी''।

संविधान की इज्जत और देश की तरक्की के लिए महिला आंदोलन हर तरह की समानता की बात करता रहा है और करता रहेगा। हमारी 'सम्पत्ति स्त्री की भी' अभियान ने जगह–जगह इस विषय पर हो रही चर्चा को आगे बढ़ाया है। हम पहले से चल रहे कार्यक्रमों से सीखकर उन्हें और फैलाने की कोशिश कर रहे हैं।

हम बदलें तो समाज बदले

किसी भी बदलाव के लिए समाज की मानसिकता बदलना जरूरी है और यह काम अकेले महिलाओं का नहीं है। महिलाओं के समान अधिकारों का लाभ पूरे परिवार और समाज को होता है। शोध से पता चलता है कि महिलाओं के संपत्ति पर अधिकार से परिवार में दरिद्रता की सम्भावना कम होती है और बच्चों का बेहतर भविष्य निर्माण होता है। हमें यह भी भूलना नहीं चाहिए की एक समान परिवार ही एक सुखी परिवार हो सकता है। आज पूरी दुनिया को पता है कि स्त्री–पुरुष समानता के बगैर परिवार, समाज और देश तरक्की नहीं कर सकते।

अंत में हम एक महत्वपूर्ण बात कहना चाहते हैं। इस अभियान में हम अधिकारों, कानूनों और न्याय से ज्यादा हमारे अपने सोच और तौर–तरीकों को बदलने का प्रयास कर रहे हैं। देश के संविधान और कानूनों ने हमें समानता दे दी है, तो फिर हम भारत के नागरिक क्यों पिछड़ रहे हैं? हम क्यों अपने दिलों और परिवारों में समानता नहीं ला पा रहे? क्यों हम अपनी ही बेटियों को नहीं अपना रहे? ऐसी कौन चीज है जो आज हमारी बेटियां नहीं कर सकतीं? अब तो वे हर अग्नि परीक्षा दे चुकी हैं और अपनी काबलियत दिखा चुकी हैं। आज हजारों बेटियाँ अपने माँ–बाप के बुढापे का सहारा हैं। देवियों को पूजने वाला हमारा देश कब तक बेटियों को मारने वालों में अव्वल आता रहेगा?

हमें बेटियों को बचाना है, अपनाना है, पढ़ाना है और जायदाद में हिस्सेदार बनाना है। अगर हम अपनी बेटियों को प्यार करते हैं तो लगायें ये नारे और बदलें अपने परिवारों और समाजों की तस्वीर–

"बेटी दिल में
बेटी will में
न दहेज न महंगी शादी
बेटी को देंगे सम्पत्ति आधी"

क्या कहता है कानून

हिन्दू स्त्रियों के संपत्ति अधिकार

डॉ. मीता मोहिनी

(पटना हाई कोर्ट एवं सिविल कोर्ट में वरिष्ठ अधिवक्ता एवं पटना लॉ कॉलेज तथा सीएनएलयू, पटना में फैकल्टी)

1. संपत्ति सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण की कुंजी है। भारत में, धर्म से उत्पन्न होने वाले पर्सनल लॉ उत्तराधिकार और विरासत को नियंत्रित करते हैं। पितृसत्तात्मक धर्मशास्त्रियों द्वारा व्याख्या किए गए ये पर्सनल लॉ महिलाओं के लिए नुकसानदेह रहे हैं, और यही वजह रही है कि ज्यादातर महिलाओं के पास संपत्ति नहीं होती है और आज भी केवल कुछ ही महिलाएं कृषि भूमि की मालिक हैं। जब महिलाएं संपत्ति की मालिक होती हैं, तो यह गरीबी को कम करने में मदद करती है, लैंगिक समानता को बढ़ावा देती है, महिला सशक्तिकरण का समर्थन करती है और एक ऐसी नींव प्रदान करती है जिस पर एक न्यायसंगत, सुरक्षित और टिकाऊ दुनिया का निर्माण होता है।

2. **असंहिताबद्ध हिंदू पर्सनल लॉ के तहत,** सहदायिकी (हमवारिस) संपत्ति में बेटे का जन्मसिद्ध अधिकार होता है, जो महिलाओं के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार को बढ़ावा देता है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 में परिवर्तन के बीज निहित हैं। जहाँ विधायिका ने हिंदू संपत्ति कानून को निष्पक्ष और न्यायपूर्ण बनाने के लिए संशोधनों की एक श्रृंखला पेश की, वहीं सबसे बड़ा असर हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में 2005 के संशोधन का हुआ, जिसने बेटी के हिस्से को गुणात्मक और मात्रात्मक रूप से बढ़ा दिया। न्यायपालिका ने टुकड़े–टुकड़े विधानों के कारण उत्पन्न होने वाले अप्रत्याशित अंतर्विरोधों की लैंगिक रूप से न्यायपूर्ण और उदार व्याख्या करने में एक सक्रिय भूमिका निभाई और कार्यपालिका ने रियायती दरों पर गृह ऋण और संपत्ति का पंजीकरण प्रदान करके महिलाओं के बीच संपत्ति के स्वामित्व को बढ़ावा देने के लिए नीतियां शुरू कीं।

3. **विरासत का हिंदू कानून (संशोधन) अधिनियम, 1929** विरासत कानून का सबसे पुराना संहिताकरण है। इसे लैंडमार्क माना जाता है क्योंकि पहली बार उत्तराधिकार के अधिकार तीन महिलाओं– बेटे की बेटी, बेटी की बेटी और बहन को दिए गए थे, जिन्हें मौजूदा उत्तराधिकार कानून के तहत उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता दी गई है। इस अधिनियम ने सामाजिक सुधार को गति प्रदान की।

4. हिन्दू महिलाओं के लिए **संपत्ति के अधिकार अधिनियम 1937** में 1938 में हुआ संशोधन उन महिलाओं के नए अधिकारों की रक्षा के लिए एक क्रांतिकारी कदम था जो विधवा थीं और जिनके या तो कोई संतान नहीं थी या केवल बेटियां थीं। ऐसी विधवाएं सहदायिकी के जीवित सदस्यों की दया पर जीती थीं, जो उनके पति की मौत के बाद उत्तरजीविता के द्वारा उनकी संपत्ति के

मालिक होते थे। अधिनियम ने विधवा को उसके पति के स्थान पर संयुक्त परिवार में एक सदस्य के तौर पर ऊपर रखा। मृत पति के हित उत्तराधिकार के द्वारा तत्काल ही उसकी विधवा में निहित होते थे, न कि उसकी उत्तरजीविता के कारण। इस संपत्ति को **''विधवा की संपत्ति''** कहा गया। सर्वोच्च न्यायालय ने पोट्टी लक्ष्मी पेरूमल्लू बनाम पोट्टी कृष्णावेनम्मा (1965 AIR 825) मामले में कहा है, ''हिन्दू कानून में बताए गए सिद्धांत के अनुसार, एक मृत व्यक्ति की विधवा उसका जीवित आधा हिस्सा है, और इसलिए जब तक वह जीवित है, ऐसा माना जाना चाहिए कि वह व्यक्ति अपनी पत्नी में जीवित रहता है। हिन्दू कानून के तहत जीवित आधे हिस्से को उस परिवार की संपत्ति में बंटवारे का दावा करने का कोई अधिकार नहीं है जिससे उसके पति का संबंध था।'' लेकिन 1937 के कानून ने उसे यह अधिकार प्रदान किया।

विधवा की संपत्ति, जिसे सीमित संपत्ति भी कहा जाता है, वह संपत्ति थी जो विधवा द्वारा विरासत, बंटवारे, उपहार या डिक्री द्वारा अर्जित की गई थी। सीमा केवल इसके निपटान पर अधिकार को लेकर थी, अन्यथा विधवा के पास उस संपत्ति की आय को रखने और उसकी व्यवस्था करने का पूरा अधिकार था। इस व्यावहारिक अधिकार ने विधवा की उसके भरण–पोषण में मदद की और इसके लिए उसे जीवित सहदायिकों पर निर्भर रहने की भी जरूरत नहीं थी। विधवा इस संपत्ति की कर्ता थी और तब से एक महिला को कर्ता होने के योग्य माना जाता है। विधवा अपनी सीमित संपत्ति को केवल कानूनी आवश्यकता के लिए, संपत्ति के लाभ के लिए, शादी, अंतिम संस्कार आदि के लिए हस्तांतरित कर सकती थी। विधवा की मृत्यु के बाद, उसकी सीमित संपत्ति उसके मृत पति के उत्तराधिकारियों को वापस मिल जाती थी।

5. **हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956** स्वतंत्रता के बाद का पहला उत्तराधिकार कानून है।

- धारा 6 में निहित बेटे के सर्वोच्च अधिकारों में हस्तक्षेप किए बिना, 1956 के अधिनियम ने बेटी को पिता की अलग संपत्ति में बेटे के बराबर हिस्सा दिया।
- यद्यपि पुत्र और पुत्री जन्म से संयुक्त परिवार के सदस्य थे, फिर भी पिता की संपत्ति में उनका अधिकार बराबर का नहीं था।
- पहली बार एक मृत हिंदू पुरुष की अलग संपत्ति का पता लगाने के लिए एक कल्पित विभाजन की कानूनी तौर पर कल्पना बनाई गई थी, और धारा 8 से 13 के तहत उसकी अलग संपत्ति के बिना वसीयत के उत्तराधिकार के लिए नियम बनाए गए थे। एक मृत हिंदू पुरुष की अलग संपत्ति धारा 8 के अनुसार, पहले वर्ग 1 के रूप में निर्दिष्ट 12 उत्तराधिकारियों पर, और वर्ग I के उत्तराधिकारी की अनुपस्थिति में, वर्ग II के उत्तराधिकारियों पर न्यागत होती है। प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारी समान रूप से और एक साथ विरासत में मिलते हैं, जिनमें से 8 महिलाएं हैं।
- धारा 14 ने विधवा संपत्ति आदि को समाप्त करके एक हिंदू महिला को पूर्ण स्वामित्व अधिकार प्रदान किया।
- साथ ही, पहली बार धारा 15 और 16 के तहत एक मृत हिंदू महिला की संपत्ति में बिना वसीयत उत्तराधिकार के लिए नियम बनाए गए। एक मृत हिंदू महिला के बच्चों (या पूर्व में मृत बच्चों के बच्चे) और पति को समान रूप से और एक साथ उत्तराधिकार मिलते हैं। यदि हिंदू महिला के बच्चे (या पूर्व में मृत बच्चों के बच्चे) नहीं हैं, तो संपत्ति का स्रोत संपत्ति के हस्तांतरण को निर्धारित करता है। जो संपत्ति एक महिला को उसके माता–पिता से मिली है, वह माता–पिता के उत्तराधिकारियों को प्राप्त होती है, जबकि जो संपत्ति उसके पति (या ससुर) से मिली है, वह पति के उत्तराधिकारियों को प्राप्त होती है। महिला की स्व–अर्जित संपत्ति या अजनबियों से प्राप्त उपहार, पति को हस्तांतरित होते हैं।

6. **हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम 2005,** 1956 के अधिनियम की धारा 6 में संशोधित अधिनियम है, जो हिंदू उत्तराधिकार कानून में निहित लैंगिक भेदभाव को दूर करने के लिए मिताक्षरा सहदायी संपत्ति में बेटियों को समान अधिकार देता है, जो बेटों के पास हमेशा से मौजूद था।

- अब मृतक पिता की सभी संतानों का उसकी सारी संपत्ति पर समान अधिकार है।
- अब बेटियों के पास सहदायिकी की सभी विशेषताएं मौजूद हैं, चाहे उनकी वैवाहिक स्थिति और जन्म तिथि कुछ भी हो।
- पुत्र का हिस्सा कम हो गया है।
- मृत हिंदू पुरुष की अन्य महिला उत्तराधिकारियों जैसे कि उसकी पत्नी, मां और दादी के हिस्से पहले जैसे ही बने रहे हैं।
- सभी उत्तराधिकारियों में से केवल पुत्री को वरीयता प्राप्त है।
- अब बेटियां संयुक्त परिवार के पूर्ण कब्जे वाले आवासीय घर के संबंध में बंटवारे की मांग कर सकती हैं। 2005 का अधिनियम धारा 23 को विलोपित कर देता है, जो एक बेटी को ऐसे आवासीय गृह के बंटवारे का अधिकार तब तक नहीं देती जब तक कि पुरुष उत्तराधिकारी उनके संबंधित हिस्सों को विभाजित करने का विकल्प नहीं चुनते।
- अब एक विधवा पुनर्विवाह करने पर भी अपने पति की संपत्ति को प्राप्त कर सकती है। 2005 का अधिनियम धारा 24 का लोप कर देता है, जिसने एक विधवा को उसके पुनर्विवाह पर अपने पति की संपत्ति को प्राप्त करने के अधिकार से वंचित कर दिया था।
- एक पिता वसीयतनामा हस्तांतरण द्वारा अपनी सहदायिकी संपत्ति का निपटान करके अपनी बेटी को बराबरी के अधिकार से वंचित नहीं कर सकता है। एक पिता के पास अपनी पृथक संपत्ति को अलग करने का अधिकार बना रहता है और इस तरह के अलगाव में से उसकी बेटी (या बेटे) को उसकी अलग संपत्ति में हिस्सा देने से इनकार किया जा सकता है।

क्या कहता है कानून

◆ 2005 का अधिनियम चार नए वर्ग 1 उत्तराधिकारियों को पेश करता है– जिनमें से तीन महिलाएं हैं। तीन नए वारिस एक पूर्व में मृत पुत्री से उतरते हैं, वे पूर्व में मृत पुत्री के पूर्व में मृत पुत्र की पुत्री, पूर्व में मृत पुत्री की पूर्व में मृत पुत्री की पुत्री और पूर्व में मृत पुत्री की पूर्व में मृत पुत्री का पुत्र हैं, जबकि चौथा नया वारिस पूर्व में मृत पुत्र की पूर्व में मृत पुत्री की पुत्री है। अब, वर्ग 1 के 16 वारिसों में 11 महिलाएं हैं।

◆ 2005 का अधिनियम हिंदू कानून के मिताक्षरा स्कूल के उदार दयाभाग स्कूल में विलय की दिशा में एक कदम है। मिताक्षरा स्कूल बेटे के पक्ष में है जबकि दयाभाग स्कूल लैंगिक न्याय पर है।

7. **वैशाली सतीश गणोरकर एवं अन्य बनाम सतीश केशवराव गणोरकर एवं अन्य** (AIR 2012 Bom 101) का फैसला जिसमें कहा गया था कि 2005 का अधिनियम केवल 9 सितंबर 2005 के बाद पैदा हुई बेटियों पर लागू होना था, प्रकाश बनाम फूलावती के मामले में खारिज कर दिया गया है।

8. **प्रकाश बनाम फूलावती (एआईआर 2016 एससी 769)** में दो न्यायाधीशों की सर्वोच्च न्यायालय की पीठ ने निर्धारित किया कि 2005 का अधिनियम अनुप्रयोग में संभावित है। 20 दिसंबर 2004, जब बिल को संसद में पेश किया गया था, की तारीख से पहले किए गए विभाजन सहित संपत्ति के किसी भी अन्य हस्तांतरण को फिर से खोला और बाधित नहीं किया जा सकता है। यह फैसला कि ''संशोधन के तहत अधिकार 9 सितंबर 2005 को जीवित सहदायिकों की जीवित बेटियों पर लागू होते हैं, भले ही ऐसी बेटियों का जन्म कभी भी हुआ हो'' को विनीता शर्मा बनाम राकेश शर्मा द्वारा खारिज कर दिया गया है।

9. **विनीता शर्मा बनाम राकेश शर्मा (2020) 9 एससीसी 1** में तीन जजों की शीर्ष अदालत की बेंच ने फैसला सुनाया कि 9 सितंबर 2005 से पहले पिता की मृत्यु, एक बेटी के अधिकार को सहदायिकी संपत्ति में उसके हिस्से का दावा करने से नहीं रोकती है। 9 सितंबर 2005 को या उससे पहले मरने वाली बेटी का हिस्सा उसके बच्चों को मिलेगा। इस फैसले में कहा गया है कि ''एक बेटी, हमेशा एक बेटी रहती है.... बेटा तब तक बेटा रहता है जब तक उसकी शादी नहीं हो जाती।''

10. **धारा 6 के तहत** एक महिला को मिलने वाली संपत्ति उसकी अलग संपत्ति के रूप में निहित होती है और धारा 15 और 16 के अनुसार यह उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित होती है। इससे एक विषम स्थिति पैदा हो गई है क्योंकि बेटा अपने बच्चों के साथ अपनी सहदायिकी शुरू कर सकता है जबकि बेटी कभी भी अपनी सहदायिकी नहीं बना सकती है। सहदायिकी बनाने के लिए, एक बेटी को एक पुरुष के पीछे छिपना पड़ता है, चाहे वह उसका पिता, भाई, दादा हो या बेटा।

11. **वेल्थ टैक्स कमिश्नर, कानपुर व अन्य बनाम चंदर सेन व अन्य ((1986) 3 SCC 567)** में कहा गया है कि जब प्रपोजिटस की मृत्यु के समय कोई एचयूएफ मौजूद नहीं है, तो पैतृक संपत्ति अपनी प्रकृति खो देती है और उत्तराधिकारी के हाथों में एक अलग संपत्ति बन जाती है।

12. **उत्तम बनाम सौभाग्य सिंह और अन्य (AIR 2016 SC 1169)** में यह कहा गया है कि धारा 6 के तहत जो संपत्तियां एक पुरुष को प्राप्त होती हैं, वे उसकी अलग संपत्ति के रूप में निहित होती हैं,

जिसमें उसके उत्तराधिकारियों का उसके जीवनकाल के दौरान कोई दावा नहीं होता है। उत्तम बनाम सौभाग्य सिंह और अन्य के विपरीत कोई भी विचार लैंगिक तौर पर भेदभावपूर्ण होगा।

13. **पत्नी के अधिकारः** एक पत्नी को अपने पति से भरण–पोषण और निवास प्राप्त करने का अधिकार है लेकिन पति की संपत्ति पर उसका कोई स्वतंत्र अधिकार नहीं है। कल्याणी (मृत) के मामले में एलआरएस बनाम नारायणन और अन्य (AIR 1980 SC 1173) में कहा गया है कि हालांकि एक पत्नी बंटवारे की मांग नहीं कर सकती है, लेकिन जब उसके पति और बेटों के बीच विभाजन होता है, तो पत्नी बेटे के बराबर हिस्सा प्राप्त करने और पति से अलग अपने हिस्से का इस्तेमाल करने की हकदार होती है।

14. **एक विधवा के अधिकारः** 1937 का अधिनियम, जिसके तहत एक विधवा ने उत्तराधिकार के माध्यम से अपने मृत पति की संपत्ति में अधिकार पाया था, को निरस्त किए जाने ने 1956 के अधिनियम के तहत एक विधवा के अधिकारों के संबंध में एक कानूनी विसंगति पैदा कर दी जब उसके बेटों ने उत्तरजीविता द्वारा संपत्ति ले ली। गुरुपद खंडप्पा मगदुम बनाम हीराभाई खंडप्पा मगदुम (AIR 1978 SC 1239) ने अन्य सहदायिकों के साथ संयुक्त परिवार की संपत्ति में विधवा मां को समान अधिकार और हित देने की वैधता को बरकरार रखा है और उसका समर्थन किया है।

15. **मां की संपत्ति में बेटी का अधिकारः** असंहिताबद्ध हिंदू कानून के तहत भी बेटी का अपनी मां की संपत्ति में अधिकार और हित था। एक महिला की संपत्ति उसके बेटे, बेटी और पति को समान रूप से और एक साथ हस्तांतरित होती है।

केंद्र ने 2005 में बेटियों को दिया पैतृक संपत्ति में हक, 15 साल बाद सुप्रीम कोर्ट ने कहा जन्मसिद्ध है यह अधिकार

कानून क्या कहता है

संसद ने 2005 में 1956 के हिंदू उत्तराधिकार कानून में संशोधन करते हुए बेटियों को पैतृक संपत्ति में अधिकार दिया। यह भी स्पष्ट किया कि दिसंबर 2004 में यह विधेयक संसद में पेश हुआ था। उससे पहले जहां संपत्ति का बंटवारा हो चुका है, उस पर नया कानून प्रभावी नहीं होगा।

तो समस्या क्या थी

संसद से कानून पारित होने के बाद बेटियों ने पैतृक संपत्ति में हक जताया तो अदालतों में याचिकाएं दाखिल होने लगी। कोर्ट ने 2016 में कहा कि यदि पिता की मौत नया कानून लागू होने से पहले हुई है तो उन्हें पैतृक संपत्ति में अधिकार नहीं मिलेगा। फिर 2018 में कहा कि यदि पिता की मौत पहले हुई है तो भी कोई फर्क नहीं पड़ेगा, बेटियों को अधिकार रहेगा ही। यानी कंफ्यूजन ही था। इसी वजह से तीन जजों की बैंच के सामने यह सवाल आया कि पिता की मौत और बेटियों के अधिकार का क्या संबंध है?

क्या मिला कोर्ट से जवाब

सुप्रीम कोर्ट में जस्टिस अरुण मिश्रा की तीन सदस्यों वाली बैंच ने 11 अगस्त को स्पष्ट किया कि बेटियों के इस अधिकार से पिता की मौत का कोई लेना-देना नहीं हैं। हिंदू परिवार में जन्म लेते ही बेटी उस परिवार की संपत्ति की कोपार्सनर (भागीदार) बन जाती है। उसका यह हक जन्मसिद्ध है। ऐसे में 2005 में पिता जीवित थे या नहीं, इससे उसके हक पर कोई असर नहीं पड़ेगा।

इसका मतलब यह है कि पैतृक संपत्ति पर अधिकार के मामले में बेटे और बेटी को बराबरी का हक है। यह भी ध्यान रखें कि सिर्फ अधिकार नहीं बल्कि दायित्व भी बराबरी का है।

ग्राफः दैनिक भास्कर

16. **समान नागरिक संहिताः** हम संविधान द्वारा शासित एक सभ्य समाज में रहते हैं और 1993 से, भारत महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन से जुड़े कन्वेंशन का हस्ताक्षरकर्ता है, जो एक समान नागरिक संहिता को लागू करने के लिए एक दायित्व बनाता है। 2005 के अधिनियम ने हिंदू उत्तराधिकार कानूनों को लैंगिक रूप से न्यायपूर्ण और एक समान बनाकर व्यवस्थित रखा है, जो उत्तराधिकार और विरासत के समान नागरिक संहिता की दिशा में अगले कदम की ओर बढ़ता है। जिस समय संविधान तैयार किया जा रहा था, समान नागरिक संहिता को एक आकांक्षी लक्ष्य के रूप में राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत के रूप में वर्गीकृत किया गया था, क्योंकि स्थापित पर्सनल कानूनों को एक ही बार में ठीक करना असंभव था। जब तक भारत को एक समान नागरिक संहिता नहीं मिल जाती, तब तक समाज को जिस चीज की जरूरत है वह है लैंगिक न्याय पर आधारित पर्सनल लॉ जो स्त्रियों के साथ बराबरी के सरोकार और सम्मान का व्यवहार करते हैं। लैंगिक न्याय पर आधारित पर्सनल लॉ इस ओर एक कदम है।

अनमोल हूं मैं

जीरो

सेविंग, बैंक बैलेंस, जीरो
रिश्ते, अपनापन, जीरो
सुंदरता, आकर्षण, जीरो
साथ, सांत्वना, जीरो
सपने, इच्छाएँ, जीरो
बर्बादी से हाथ मिला रहे हैं,
बिखरने का डर, जीरो
समाज का डर, जीरो
बस जीरो ऐसी कि
हर कोई मेरे साथ लगकर
कीमती हो जाना चाहता है।

अनीता भारद्वाज

जानी–मानी विचारक, कवयित्री, लेखिका, शिक्षिका और ब्लॉगर

सच्ची बात

अदृश्य महिला किसान

खेती कर सकती हैं तो मालिक क्यों नहीं हो सकतीं महिलाएं

बीना अग्रवाल

विकास अर्थशास्त्री और मैनचेस्टर विश्वविद्यालय में वैश्विक विकास संस्थान में विकास अर्थशास्त्र और पर्यावरण की प्रोफेसर हैं। उन्होंने भूमि, आजीविका और संपत्ति के अधिकारों पर विस्तार से लिखा है। उनकी सबसे प्रसिद्ध कृतियों में पुरस्कार विजेता पुस्तक ''ए फील्ड ऑफ वन्स ओनः जेंडर एंड लैंड राइट्स इन साउथ एशिया''है। उन्हें कई राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है।

महिला किसान भारत के कृषि और इससे संबंद्धित क्षेत्रों की रीढ़ हैं। वे केवल खेत में फसल उगाने का ही काम नहीं करतीं, बल्कि पशुधन, मछली पालन, मुर्गी पालन और गैर–वनोपज जैसे अलग–अलग तरह के कई काम करती हैं। खेतों में वे बिना मशीन के हाथ से किए जाने वाले कठिन या हाड़–तोड़ काम करती हैं, खासकर धान की खेती में रोपाई, निराई और कटाई। अनुमानित रूप से उनमें, पशुधन 60 फीसदी और मत्स्य पालन में 13.5 मिलियन में से 32 फीसदी शामिल हैं। लेकिन आंकड़े बहुत हद तक महिलाओं के काम की विविधता और गहनता को पकड़ने में विफल हैं। सांख्यिकीय रूप से, 2005 में, महिलाओं ने हमारे कृषि कार्य बल (एनएसएसओ 2004–05) में 40 प्रतिशत का गठन किया। 2017–18 (पीएलएफएस) में यह 30 फीसदी तक गिर गया, हालांकि महिलाओं की तुलना में ज्यादा पुरुष गैर–कृषि क्षेत्रों में चले गए।

सच्ची बात

महिलाओं के योगदान को क्यों कम किया गया है? एक तो यह इस पर निर्भर करता है कि हम किसे काम मानते हैं। हम केवल भुगतान किए गए काम की गणना करते हैं, तो ग्रामीण महिलाओं की कार्य सहभागिता दर (खेत और गैर–कृषि कार्य सहित) केवल 17.5 फीसदी (एनएसएस 2011–12) आती है। लेकिन घर के उत्पादन, स्व रोजगार और बेरोजगारी जोड़ने पर यह दर 64.8 फीसदी आती है।

दूसरा इसमें सामाजिक धारणाएं मायने रखती हैं। महिलाओं को किसानों के बजाय कृषि सहायकों के रूप में देखा जाता है, चाहे उनका योगदान कुछ भी हो। पुरुष गैर–कृषि काम करने लगता है और महिलाएं वास्तव में खेती संभालने लगती हैं, तब भी उनके काम को पहचान नहीं मिलती क्योंकि वे खेत की मालिक नहीं होतीं।

धारणा होती है कि महिलाएं आश्रित हैं और किसान के मरने पर ही उसे विरासत में जमीन मिलेगी। यह सोच भी उनकी पहचान को प्रभावित करती है। 2014 में किया गया मेरा ताजा शोध बताता है कि औसतन 9 राज्यों में सभी भूस्वामियों में से सिर्फ 14 फीसदी महिलाएं जमीन की मालकिन थीं, जो भूस्वामी ग्रामीण परिवारों में केवल 11 फीसदी (अग्रवाल आदि 2020) भूमि की मालिक हैं। 2005 के हिंदू उत्तराधिकार संशोधन अधिनियम, जिसने बेटियों और बेटों को कृषि भूमि में समान अधिकार दिया, इसके बावजूद इन महिलाओं को बेटी के रूप में नहीं, पति के न रहने पर विधवा के रूप में जमीन मिली।

महिला किसानों को गृहिणियों के रूप में मानते हुए कृषि उत्पादकता में इसका परिणाम भी दिखता है। यहां तक कि जब वे प्रभावी रूप से खेतों का प्रबंधन कर रही होती हैं, तब भी महिलाएं पुरुष पक्षपाती माहौल से दो चार होती हैं जिनमें, क्रेडिट, नई तकनीक पर सूचना, परिपाटी, सिंचाई और बाजार शामिल है। प्रसार के नए तरीके भी उन्हें दरकिनार करते हैं। साइंस के एक अध्ययन में पाया गया कि सेलफोन के माध्यम से दी जाने वाली कृषि सूचनाओं ने भारत सहित पूरे देशों में अनुशंसित इनपुट को 22 फीसदी और पैदावार में 4 फीसदी की दर से अपनाने वाले किसानों की मुश्किलें बढ़ा दी हैं। लेकिन महिलाओं को इस विकास से लाभ मिलने की संभावना कम है क्योंकि कुछ ही महिलाओं के पास अपने मोबाइल हैं और यहां तक कि इनमें से कुछ ही के पास इंटरनेट है। स्त्री–पुरुष भेद हमारी उत्पादकता और वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालेंगे। 2011 में, एफएओ ने वैश्विक सबूतों का विश्लेषण किया और पाया कि अगर महिला किसानों के पास जमीन और अन्य इनपुट के लिए पुरुषों के समान पहुंच हो, तो फसल की पैदावार 20–30 फीसदी ज्यादा हो सकती है और विकासशील देशों में कृषि विकास दर 2.5 से 4 फीसदी ज्यादा हो सकती है।

क्या इस पूर्वाग्रह को दूर किया जा सकता है? हां, काफी हद तक। महिलाएं समूहों में संयुक्त रूप से भूमि के पट्टे देकर या अपने छोटे भूखंडों की सम्मिलित कर, अपने श्रम और पूंजी को मिलाकर, लागत और लाभों को साझा करके खेती करें। समूह के रूप में वे नाबार्ड की संयुक्त देयता समूह योजना के माध्यम से क्रेडिट प्राप्त कर सकती हैं, स्केल इकोनॉमी से लाभ प्राप्त कर सकती हैं और मुनाफे के साथ अपनी उपज बेच सकती हैं।

केरल में मेरे शोध से पता चला है कि सैंपल वाले सभी महिला समूह के खेतों में औसतन प्रति हेक्टेयर उत्पादन का लगभग दोगुना और ज्यादातर पुरुषों द्वारा प्रबंधित व्यक्तिगत परिवार के खेतों की तुलना में प्रति खेत पांच गुना शुद्ध रिटर्न है। अधिकांश व्यक्तिगत खेत मालिकों के विपरीत मार्च 2020 में लगभग 31,000 समूह खेत कोविड लॉकडाउन में भी बच गए। केरल से परे (जहां 68,000 से अधिक महिलाओं के समूह फार्म हैं), गुजरात, बिहार और पश्चिम बंगाल में भी महिलाओं ने समूह खेती शुरू की है, जिसमें लाभ स्पष्ट दिख रहा है।

सैकड़ों महिलाएं, पुरुषों के साथ कृषि कानूनों के खिलाफ विरोध में मौजूद हैं। देखा जाए तो पुरुषों की तुलना में उनका दांव कहीं ज्यादा बड़ा है क्योंकि ग्रामीण भारत में 73 फीसदी महिलाओं के मुकाबले केवल 55 फीसदी पुरुष खेती पर निर्भर हैं। अब महिला किसानों को उनका वाजिब हक मिलें।

www.outlookhindi.com से साभार

जमीन तय करती है हैसियत

प्रोफेसर बीना अग्रवाल ने 1994 की अपनी मशहूर किताब 'अ फील्ड्स ऑफ वन्स ओन' में लिखा था कि "वह एकमात्र सबसे अहम कारक जो महिलाओं के हालात को प्रभावित करता है, वह है ''संपत्ति पर इख्तियार में जेंडर का फासला"। यह फासला तब से अब तक बहुत कम बदला है। प्रोफेसर अग्रवाल ने कहा कि "महिला किसानों पर काम करते हुए मुझे यह स्पष्ट हुआ कि महिलाओं की वंचित हैसियत खासकर जमीन जैसी उपजाऊ जायदाद पर उनके अधिकार की कमी से गहरे जुड़े हैं। इसकी वजह से उन्हें कर्ज, औजार व यंत्र और तकनीक तक पहुंच हासिल करने में मुश्किलें आती हैं। दरअसल ग्रामीण हिंदुस्तान के ढांचों पर काम करने वाला कोई भी इंसान जानता है कि यह जमीन का मालिकाना हक ही है जो यह तय करता है कि कोई परिवार गरीब है या माली तौर पर मजबूत। यही मालिकाना हक उसकी सामाजिक हैसियत और राजनीतिक ताकत को भी तय करता है, और तो और, वे महिलाएं जिनके पास खुद की संपत्ति नहीं भी है, लेकिन अगर वे जमीन–जायदाद वाले घरों की हैं, तो उन्हें भरा–पूरा और खुशहाल माना जाता है।''

अपना हक

पैतृक संपत्ति, कृषि भूमि और स्त्रियां

लंबा इंतजार: जमीन पर महिलाओं के उत्तराधिकार की लड़ाई

इसे कानून और न्याय व्यवस्था की विडम्बना ही कहा जायेगा कि विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856 पारित होने के करीब सौ साल बाद भी भारतीय समाज में एक विधवा स्त्री को उत्तराधिकार में संपत्ति पाने के लिए लंबी कानूनी लड़ाई लड़नी पड़ी! और आज भी यह तय नहीं है कि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में संशोधन (2005) के बाद बेटियों को पैतृक संपत्ति में अधिकार कब मिलेगा? जन्म से मिलेगा या सिर्फ उन बेटियों को जिनके पिता की मृत्यु संशोधन (9 सितंबर 2005) के बाद हुई?

अरविन्द जैन

(सुप्रीम कोर्ट में अधिवक्ता। भारतीय समाज और कानून में स्त्री की स्थिति से संबंधित लेखन के लिए जाने जाते हैं। बाल अपराध न्याय अधिनियम के लिए भारत सरकार द्वारा गठित विशेषज्ञ समिति के सदस्य। हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा वर्ष 1999–2000 के लिए 'साहित्यकार सम्मान' व कथेतर साहित्य के लिए वर्ष 2001 के राष्ट्रीय शमशेर सम्मान से सम्मानित)

कृषि भूमि में विधवा का हिस्सा

गुरुअम्मा, के पति की मृत्यु 1954 में हो गई थी। अदालती फैसले के अनुसार हुए बंटवारे में उसके हिस्से आई संपत्ति में कुछ 'कृषि भूमि' भी शामिल थी, जो उसके देवर (और उसके बेटे–बेटी) देना नहीं चाहते थे। हिस्सा ना देने का तर्क–कुतर्क यह था कि संपत्ति में 'कृषि भूमि' शामिल नहीं होती। अंतिम चरण में विवाद जब सर्वोच्च न्यायालय पहुंचा, तो न्यायमूर्ति सुश्री सुजाता मनोहर और जी.बी. पटनायक ने अपने फैसले में कहा कि हिन्दू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 के अंतर्गत विधवा को उत्तराधिकार में मिलने वाली संपत्ति में 'कृषि भूमि' भी शामिल है। 'संपत्ति' को अगर स्पष्ट रूप से अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है, तो संपत्ति की परिभाषा में 'कृषि भूमि' भी शामिल मानी जायेगी। अगर विधायिका चाहती तो 'कृषि भूमि' को इस कानून से बाहर रख सकती थी। उच्च न्यायालय के निर्णय को सही मानते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय में कहा कि संपति की परिभाषा में 'कृषि भूमि' भी शामिल मानी जाएगी।

सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के बाद भी विभिन्न अदालतों में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के अंतर्गत 'संपत्ति' में 'कृषि भूमि' के शामिल होने ना होने के बारे में विवाद बना रहा। पहला तर्क यह था कि उपरोक्त निर्णय हिन्दू महिला संपत्ति अधिकार अधिनियम, 1937 से संबंधित है और दूसरा यह कि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 इसके बाद बना कानून है।

'सम्पत्ति' में 'कृषि भूमि' शामिल है या नहीं?

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति यू. यू. ललित और एम. आर. शाह के समक्ष विचारणीय 'यक्ष प्रश्न' यह था कि क्या 'कृषि भूमि' भी उत्तराधिकार कानून की धारा 22 के प्रावधानों के दायरे में आती है? इस सवाल पर अभी तक विभिन्न उच्च न्यायालयों के विरोधाभाषी फैसले आते रहे। उत्तराधिकार के अधिकांश अदालती मुकदमों में 'कृषि भूमि' भी शामिल रहती ही है। इसलिए सर्वोच्च न्यायालय के सामने यह एक सार्वजनिक महत्व का गंभीर मुद्दा था।

कानूनी प्रावधान होने के बावजूद महिलाओं को जमीन पर अधिकार मयस्सर नहीं

'कृषि भूमि' विवाद की पृष्ठभूमि में लाजपत और उसके बेटों का मामला है, जिसके मुताबिक लाजपत की मृत्यु के बाद, उसकी कृषि भूमि उसके दो पुत्रों नाथू और संतोख को मिली। नाथू ने अपना हिस्सा एक बाहरी व्यक्ति को बेच दिया। संतोख ने मामला हमीरपुर अदालत में दायर कर कहा कि (उत्तराधिकार कानून की धारा 22 के अनुसार) उसे इस मामले में प्राथमिकता के आधार पर संपत्ति लेने का अधिकार है। जिला अदालत ने मद्रास, और उड़ीसा उच्च न्यायालय के फैसलों के आधार पर डिक्री संतोख के पक्ष में दी (जिसे बाद में उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय ने भी बरकरार रखा)। यहां यह बताना जरूरी है कि इस बीच नाथूराम की मृत्यु होने के बाद, उसकी जगह उसके उत्तराधिकारी बाबूराम ने ले ली थी।

हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति के सामने जब बाबूराम की अपील आई, तो उसके सामने पहले से हुए दो विरोधाभासी फैसले थे। वो भी उसी उच्च न्यायालय के। पहले

एकलपीठ का फैसला (2008) यह था कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के प्रावधान कृषि भूमि की बिक्री पर लागू नहीं होते, जबकि इसके विपरीत दूसरी एकलपीठ का निर्णय (2012) था कि उत्तराधिकार कानून के प्रावधान कृषि भूमि की बिक्री पर लागू होते हैं। ऐसे में एकल पीठ के न्यायमूर्ति क्या करते! उन्होंने समुचित फैसले के लिए अपील खंडपीठ (दो जज) को भेज दिया। ऐसी स्थिति में नियमानुसार यही प्रक्रिया निर्धारित भी है।

खंडपीठ (कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश संजय करोल व न्यायामूर्ति धर्मचंद चौधरी) ने दो विरोधाभासी एकल पीठों के निर्णयों पर बहस सुनने और विवेचना के बाद फैसला सुनाते हुए कहा कि एकल पीठ (2012) के फैसले को ही सही माना जाना चाहिए। इसका परिणाम यह था कि उत्तराधिकार कानून के प्रावधान, कृषि भूमि से जुड़े विवादों पर भी लागू होंगे। खंडपीठ के स्पष्टीकरण के बाद, न्यायामूर्ति सी.बी बारोवलिया ने (सात मई, 2018) अपील खारिज कर दी, जिसके विरुद्ध बाबूराम द्वारा सुप्रीम कोर्ट में विशेष अनुमति याचिका दायर की गई।

'संपत्ति' में 'कृषि भूमि' शामिलः सुप्रीम कोर्ट

उत्तराधिकार कानून 'कृषि भूमि' पर लागू हैं या नहीं के सवाल पर, विस्तृत विवेचन के बाद सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्तियों (ललित और शाह) ने निर्णय में उच्च न्यायालय के फैसले को ही सही ठहराया। भविष्य के लिए यह भी स्पष्ट किया कि धारा 22 में प्रावधान है कि जब बिना वसीयत के किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है, तो उसकी संपत्ति उत्तराधिकारियों पर आ जाती है। उत्तराधिकार कानून की धारा 22 'कृषि भूमि' पर भी लागू होगी। इसलिए संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्ति का बंटवारा होने पर या उससे पहले, यदि उत्तराधिकार में मिली संपत्ति को कोई एक सदस्य बेचना चाहे, तो अन्य वारिस प्राथमिकता के आधार पर उस संपत्ति को खरीदने का दावा कर सकते हैं। यानी संपत्ति किसी तीसरे व्यक्ति को बेचने से पहले, अन्य वारिसों की सहमति अनिवार्य होगी। उत्तराधिकार कानून की धारा 4 (2) के समाप्त होने का इस पर कोई फर्क नहीं पड़ेगा, क्योंकि वह प्रावधान 'कृषि भूमि' पर काश्तकारी के अधिकारों' से ही संबंधित था। उत्तराधिकार कानून (1956) बनने से पहले, शास्त्रिक हिन्दू कानूनों में भी, ऐसे ही नियम और परंपरा मौजूद थी। भारतीय विधायिका द्वारा ऐसा प्रावधान बनाये–बचाये रखने का मुख्य उद्देश्य भी यही (रहा) है कि परिवार (या संपत्ति) में बाहरी व्यक्ति ना घुस सके।

सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त दोनों फैसलों से यह स्पष्ट हो गया कि पैतृक संपत्ति में 'कृषि भूमि' भी शामिल है और इस पर बेटियों और विधवा स्त्री का अधिकार है। उन्हें 'कृषि भूमि' में हिस्सा पाने (लेने) से वंचित नहीं किया जा सकता।

अपना हक

उत्तराधिकार कानून संशोधन (2005) कब से लागू होगा?

उपरोक्त दोनों निर्णयों के बीच उत्तराधिकार कानून की भाषा–परिभाषा में एक और नया पेच आ फँसा। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में हुए संशोधन के अनुसार यह प्रावधान पारित किया गया है कि किसी व्यक्ति की मृत्यु बिना कोई वसीयत किये हो गई है और संपत्ति में पैतृक संपत्ति भी शामिल है, तो मृतक की संपत्ति में बेटे और बेटियों को बराबर हिस्सा मिलेगा। बेटी को भी पुत्र की तरह 'कोपार्शनर (हमवारिस)' माना–समझा जाएगा। यानी अब पैतृक संपत्ति में बेटियों को भी, बेटों के समान अधिकार दे दिया गया है। हालांकि कानून में ही यह व्यवस्था कर दी गई कि अगर पैतृक संपत्ति का बंटवारा 20 दिसंबर, 2004 से पहले हो चुका है, तो उस पर यह संशोधन लागू नहीं होगा। पर समस्या यह है कि सुप्रीम कोर्ट के एक निर्णय के अनुसार अगर पिता की मृत्यु 9 सितंबर 2005 से पहले हो चुकी है, तो बेटी को पैतृक संपत्ति में अधिकार नहीं मिलेगा। जबकि दूसरे फैसले के अनुसार अधिकार मिलेगा। सो संशोधन के बावजूद, पैतृक संपत्ति में बेटियों के अधिकार का मामला, अंतर्विरोधी और पेचीदा कानूनी व्याख्याओं में अभी भी उलझा हुआ है।

सम्पत्ति का बंटवारा पहले और अब

उल्लेखनीय है कि संशोधन से पहले पैतृक संपत्ति का सांकेतिक बंटवारा, पहले पिता और पुत्रों के बीच होता था। पिता के हिस्से आई संपत्ति का फिर से बराबर बँटवारा पुत्र–पुत्रियों (भाई–बहन) के बीच होता था। इसे सरल ढंग से कहूँ तो मान लो पिता के तीन पुत्र और दो पुत्रियां हैं और पिता के हिस्से आई पैतृक संपत्ति 100 रुपये की है, तो यह यह माना जाता था कि अगर बंटवारा होता तो पिता और तीन पुत्रों को 25–25 रुपये मिलते। फिर पिता के हिस्से में आये 25 रुपयों का बंटवारा तीनों पुत्रों और दोनों पुत्रियों के बीच पाँच–पाँच रुपये बराबर बाँट दिया जाता था। मतलब तीन बेटों को 255=30×3=90 रुपये और बेटियों को 5×2=10 रुपये मिलते। संशोधन के बाद पाँचों भाई–बहनों को 100÷5=20 रुपये मिलेंगे या मिलने चाहिए। हालाँकि भारतीय समाज में अधिकाँश 'उदार बहनें' स्वेच्छा से, अपना हिस्सा अभी भी भाइयों के पक्ष में ही छोड़ देती हैं।

स्वयं अर्जित संपत्तिः वसीयत का असीमित अधिकार

कहना ना होगा कि कोई भी व्यक्ति (स्त्री–पुरुष) स्वयं अर्जित संपत्ति, वसीयत द्वारा किसी को भी दे सकता है। जरूरी नहीं कि परिवार में ही दे, किसी को भी दे (दान कर) सकता है। कोई भी अपने पिता या पति के जीवन काल में, उनकी स्वयं अर्जित संपत्ति बंटवाने का अधिकारी नहीं है। मुस्लिम कानून के अनुसार अपनी एक–तिहाई से अधिक संपत्ति की वसीयत नहीं की जा सकती। हिन्दू कानून में पैतृक संपत्ति का बँटवारा, संशोधन से पहले सिर्फ मर्द उत्तराधिकारियों के बीच ही होता था। वैसे वसीयत का असीमित अधिकार रहते, उत्तराधिकार कानून 'अर्थहीन' हैं।

वसीयत ना होने की स्थिति में बेटियों को पिता की स्वयं अर्जित संपत्ति में ही नहीं, बल्कि पिता की पैतृक संपत्ति (उनका हिस्सा) में से भाइयों के बराबर अधिकार मिलेगा। निःसंदेह संतान को अपने पिता–माता की संपत्ति में अधिकार है, बशर्ते मां–बाप बिना वसीयत किये मरें हों। बेटे–बेटी को सौतेले माता–पिता की संपत्ति में भी कोई अधिकार नहीं है। मतलब जो लेना हो, अपने माँ–बाप से लो! सौतेले मां–बाप से कुछ नहीं मिलेगा।

streekaal.com से साभार

चित्रः दैनिक भाष्कर

Sudha
Milk and Milk Products
वादा शुद्धता का

Empowering Women through Dairy Co-operatives

India is a leading dairy economy with a vast number of milk producers organized into mixed-gender cooperatives. **COMFED** also undertakes supportive activities of Milk Producers for income and social security which includes 4258 Women Dairy Co-operatives exclusively run by women.

COMFED giving them opportunities to emerge as leaders in taking decisions and to participate in day-to-day dairy activities to make a positive change in their lives and to their families.

Supportive Programmes & Benefits:

- **Sat Nischay-2**, an ambitious scheme of the State Government under **"Aatamnirbhar Bihar 2020-25"** with an objective to improve access to Milk Co-operatives and provide good quality Sudha Products
- Provides Balanced Cattle feed
- Artificial Insemination Programme & inclusion in Management Committee
- Cattle Insurance, Cattle Purchase on Subsidy & Vaccination
- Assistance in installation of Biogas Plant
- Around 13 lakh families are benefitted

COMFED

BIHAR STATE MILK CO-OPERATIVE FEDERATION LTD.

E-mail: comfed.patna@gmail.com • Toll Free No.: 18003456199 • www.sudha.coop

Dairy Entrepreneurship - Empowering women, empowering life

Dot Communications_Comfed_Women Empowerment_Magazine Ad_Size A4

कोविड का कहर

विधवाओं को बेघर कर गया कोरोना

अपने भूमि अधिकारों तक पहुंचने के लिए संघर्ष कर रही हैं कोविड–19 के दौरान विधवा हुई महिलाएं

पूनम कथूरिया

(सोसाइटी फॉर वीमेन एक्शन एंड ट्रेनिंग इनिशिएटिव्स (स्वाति) की संस्थापक व निदेशक हैं। महिलाओं के सशक्तिकरण और नेतृत्व पर 25 से अधिक वर्षों से काम कर रही हैं)

कैरेन पिनेरो

(सोसाइटी फॉर वीमेन एक्शन एंड ट्रेनिंग इनिशिएटिव्स (स्वाति) के साथ एक शोध सलाहकार के रूप में कार्यरत)

अब भी रोज अपना नया रूप दिखाने वाली कोविड–19 महामारी ने अपनी दूसरी लहर के दौरान भारत के ग्रामीण इलाकों को बहुत बुरी तरह चपेट में लिया था। दूसरी लहर के दौरान पहली लहर की तुलना में अधिक लोग मरे थे और ग्रामीण इलाकों में गैर आनुपातिक रूप से पुरुषों की मृत्यु दर महिलाओं की तुलना में अधिक थी। हम लोग गुजरात के ग्रामीण इलाकों में काम कर रहे थे। उन इलाकों में दूसरी लहर के दौरान मृत्यु दर में 22 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। द वायर की एक रिपोर्ट के अनुसार कोविड–19 के कारण मरने वालों की वास्तविक संख्या उपलब्ध आंकड़ों से 27 गुना अधिक है।

आधिकारिक रिकॉर्ड की कमी के बावजूद यह बात स्पष्ट है कि इस महामारी में हजारों औरतें विधवा हुई हैं। कइयों ने अपने परिवार के इकलौते कमाने वाले आदमी को खोया है और दुख और आजीविका के दोहरे बोझ के तले जीने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। भारत के संदर्भ में यह और अधिक गंभीर चिंता का विषय है क्योंकि अकेले जीवन जी रही औरतों को कलंक के रूप में देखा जाता है। और समुदाय व सरकार की नीतियों में इन औरतों की जगह हमेशा हाशिये पर होती है। एकल औरतों की बढ़ती संख्या के सामाजिक प्रभाव को कुछ देर तक नजरंदाज भी कर दें तो कोविड–19 के कारण आने वाले संकट ने ग्रामीण भारत में 'कृषि के नारीकरण' की स्थिति को पैदा कर दिया है। इसकी व्याख्या इस रूप में की जा रही है कि चूंकि औरतों के पास अपनी ही जमीन के मालिकाना हक के संदर्भ में किसी भी तरह का फैसला लेने का अधिकार नहीं होता है। ऐसी स्थिति में वे अनजाने ही अवैतनिक कृषि श्रम बल (अपनी ही जमीन पर काम करने वाली) की सूची में शामिल हो जाती हैं।

जमीन के मालिकाना हक को लेकर लिंग आधारित आंकड़ों की कमी है। कृषि जनगणना जमीन के मालिकाना अधिकार के अलावा सामाजिक संरचनाओं को लेकर भी थोड़ी बहुत जानकारी

देती है। भारत में कुल कृषि योग्य भूमि के सिर्फ 12.8 प्रतिशत पर ही औरतों का मालिकाना हक है जिसमें जमीन का क्षेत्र 10.3 प्रतिशत है। गुजरात में यह आंकड़ा और जगहों की तुलना में थोड़ा सा ही अधिक है। यहाँ के 14.1 प्रतिशत हिस्से पर औरतों का मालिकाना हक है जो कुल जमीन का 13.2 प्रतिशत हिस्सा है।

कानूनी और नीतिगत स्तर पर मिली स्वीकृति के बावजूद औरतों के भूमि अधिकार भेदभाव वाले सामाजिक–सांस्कृतिक मानदंडों और पितृसत्तात्मक परम्पराओं में गहरे धँसे हुए हैं। लैंगिक असमानताओं को दूर करने के लिए राज्यों द्वारा उठाए गए ठोस कदमों की कमी के कारण कानूनी ढांचे और वास्तविक रूप में इन अधिकारों के प्रयोग को सक्षम बनाने की प्रक्रिया के बीच का अंतर बहुत गहरा है। पुरुषों और लड़कों को बिना किसी विवाद के जमीन का मालिकाना हक मिल जाता है वहीं भूमि पर औरतों द्वारा किए गए कानूनी दावे पर हमेशा ही सवाल उठाया जाता रहा है और अक्सर उन्हें हिंसात्मक विरोध का भी सामना करना पड़ा है।

वायरस लिंग तटस्थ हो सकता है लेकिन इसका प्रभाव नहीं

महामारी के प्रकोप के बाद से हम लोगों ने ऐसे अध्ययन किए जिनके माध्यम से हम औरतों और लड़कियों पर महामारी के प्रभाव को समझ सकें। इन किए गए जांचों का मुख्य विषय औरतों के भूमि अधिकारों पर कोविड–19 का प्रभाव था। ग्रामीण इलाकों में भूमि एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में काम करती है। और ग्रामीण इलाकों की आजी. विका में भूमि आधारित आजीविका का योगदान 70 प्रतिशत होता है। 85 प्रतिशत से अधिक औरतें खेती के कामों से जुड़ी होती है। इस आंकड़ें को देखते हुए हम लोग उन औरतों के भूमि या विरासत में मिली जमीन तक उनकी पहुँच पर पड़ने वाले उस प्रभाव को समझना चाहते थे जिन्होंने अपना पति, पिता, ससुर या परिवार का कोई ऐसा सदस्य खोया है जो जमीन का मालिक था।

15 मार्च 2021 से 15 मई 2021 के बीच हम लोगों ने गुजरात के 40 गांवों में तीन जिलों में (सुरेन्द्रनगर, महिसागर और पाटन) के पाँच प्रखंडों (दसड़ा, ध्रंगधरा, संतरामपुर, सिद्धपुर और राधनपुर) में गहन अध्ययन किया। उस दौरान कोविड–19 के कारण या संभावित कारण से कुल 473 लोगों की मौत दर्ज की गई थी, जिसमें 63 प्रतिशत पुरुष थे और 27 प्रतिशत औरतें।

औरतों के साथ किए गए साक्षात्कार और सामूहिक बात. चीत से उन विशिष्ट चुनौतियों के बारे में पता लगा जिनका सामना उन्हें अपने भूमि अधिकारों तक पहुँचने के क्रम में करना पड़ता है। ये चुनौतियाँ जमीन के पुरुष मालिकों और परिवार में फैसले लेने वाले सदस्य के साथ महिलाओं के संबंध, उस महिला की उम्र, उसके बच्चे हैं या नहीं, उसका बच्चा लड़का है या लड़की और ऐसे ही विभिन्न कारकों से जुड़ी होती है।

हाल ही में विधवा हुई 26 साल की संगीताबेन का एक चार साल का बेटा है। उसका परिवार पतदी शहर में रहता था जहां बिजली विभाग में उसके पति की सरकारी नौकरी थी। पति की मृत्यु के बाद संगीताबेन को अपने पति के परिवार के साथ मिठगोढ़ा गाँव में जाकर रहना पड़ा जो पतदी शहर से 16 किलोमीटर दूर है। संगीताबेन का मानना है कि उसके पास परिवार की जमीन से जुड़ी किसी तरह की जानकारी नहीं है। "मैं जानती हूँ कि यह जमीन मेरे ससुर की है लेकिन मुझे यह नहीं मालूम कि उस जमीन पर किसी और का नाम भी है या नहीं। मैं यह भी नहीं जानती हूँ कि मेरे पति का नाम भी उस कागज पर है या नहीं।" शुरुआत में संगीताबेन ने जमीन के कागज पर अपने नाम को शामिल करने में किसी भी तरह की चुनौती की आशंका से इंकार कर दिया था। "इसमें किसी तरह की दिक्कत नहीं होगी क्योंकि मेरा एक बेटा है," लेकिन बाद में अपनी बात आगे बढ़ाते हुए उसने कहा कि "लेकिन यह काम जल्दी नहीं होगा क्योंकि मेरी उम्र अभी कम है और मेरे देवर की अभी तक शादी नहीं हुई है। जब तक उसकी शादी नहीं हो जाती है तब तक मेरा नाम जमीन के कागज में नहीं जोड़ा जाएगा।" बहुत हद तक इस बात की संभावना दिख रही थी कि संगीताबेन की शादी उसके देवर से कर दी जाएगी।

मिठगोढ़ा में रहने वाली 48 वर्षीय ललिताबेन ने कोविड–19 के कारण अपने पति को खो दिया। वह पारिवारिक जमीन से जुड़े कागजों पर अपना नाम शामिल करने की प्रक्रियाओं के लिए पूरी तरह से अपने देवर पर आश्रित होने के कारण चिंतित हैं। प्रोटोकॉल के अनुसार उत्तराधिकारी के नाम जोड़ने की प्रक्रिया एक महीने के अंदर पूरी हो जानी चाहिए। इस अवधि के बीत जाने के बाद इस मामले को जिला दफ्तर में ले कर जाना पड़ता है जो एक जटिल और खर्चीली प्रक्रिया भी हो सकती है। जबकि परंपरा के अनुसार एक विधवा औरत अपने पति की मृत्यु के बाद कम से कम छः महीने तक घर से बाहर नहीं जा सकती है।

कोविड का कहर

औरतें अपने भूमि के अधिकार को सुरक्षित करना चाहती हैं लेकिन उन्हें सामाजिक समर्थन नहीं मिलता है

उपरियाला गाँव की 43 वर्षीय नीलाबेन अपने पति और तीन बच्चों के साथ अहमदाबाद में रहती थी। कोविड–19 के कारण उनके पति की मृत्यु हो गई। पति की मृत्यु के बाद वह अपने बच्चों के साथ अपने गांव वापस लौट गई। नीलाबेन के देवर ने पारिवारिक जमीन में उन्हें उनका हक देने से मना कर दिया। आमदनी का कोई और स्त्रोत न होने के कारण उन्हें दूसरों के खेत में दिहाड़ी मजदूर के रूप में काम करना पड़ता है और वह और उनका परिवार उनके सास–ससुर के घर में रहते हैं। किसी भी तरह के समर्थन की कमी के कारण वह अपने हक की लड़ाई लड़ने से कतराती है।

औरतों को उनका परिवार 'दूसरे घर से आई हुई लड़की' के रूप में देखता है और उनके दावों को सीमित कर दिया जाता है

महामारी के दौरान 29 साल की काजलबेन के ससुर की मृत्यु हो गई और अब जमीन के कागज में परिवार के सभी सदस्यों का नाम जोड़ा जाएगा। जब उससे यह पूछा गया कि क्या उसका नाम भी इस सूची में जोड़ा जाएगा तब उसने कहा कि, "अरे, नहीं। दूसरे घर से आई कल की बहू पर कौन भरोसा करेगा?"

जीतिबेन की उम्र 50 साल है और अपनी मौत के बाद उनके पति अपने पीछे तीन बच्चे और 25 एकड़ जमीन छोड़ कर गए हैं। जीतिबेन के ससुर उनके पति की जमीन के कागज पर उसका और उसकी बेटियों के बदले उसके देवर का नाम जोड़ने का दबाव दे रहे हैं। उसके ससुर का कहना है कि, "हम तुम्हारा ख्याल रखेंगे लेकिन जमीन परिवार के लोगों के पास ही रहना चाहिए।"

औरतों को 'स्वेच्छा' से अपने अधिकारों को छोड़ देने के लिए मजबूर किया जाता है

गोरियावाड़ गाँव में रहने वाली पचास वर्षीय लसुबेन ने दूसरी लहर के दौरान कुछ ही दिनों के अंतराल पर अपने पति और सास–ससुर तीनों को खो दिया। परिवार की परंपरा के अनुसार लसुबेन अगले एक साल तक घर से बाहर कदम नहीं रख सकती है। उनके ससुर के पास 30 बीघा जमीन थी जिसे उसके पति और देवर दोनों में बराबर रूप से बांटा गया था। मृत्यु के बाद लसुबेन के देवर ने लैंड म्यूटेशन प्रोसेस (स्थानीय नगर निगम के राजस्व अभिलेखों में जमीन के कागज पर लोगों का नाम जोड़ने या बदलने की प्रक्रिया) शुरू कर दी और इसके तहत अपना, लसुबेन और उनके बच्चों का नाम कागज में जुड़वा दिया। कुछ ही दिनों बाद राजस्व तलाती (अधिकारी) की सलाह पर, लसुबेन के देवर ने लसुबेन को मजबूर कर दिया कि वह लसुबेन के बेटे के पक्ष में अपने और अपनी बेटियों के अधिकारों को छोड़ दें।

hindi.idronline.org से साभार

अगुआ

संपत्ति अधिकारों की मुखर अधिवक्ता

लीला सेठः मदर ऑफ लॉ

लीला सेठ को यौन हिंसा और संपत्ति से जुड़े कानूनों को बदलने के लिए जाना जाता है। उन्हें भारतीय न्यायपालिका के एक सफल सदस्य के रूप में जाना जाता था। उन्हें मदर ऑफ लॉ की उपाधि से भी नवाजा गया है। लीला सेठ कभी भी अल्पसंख्यकों के अधिकारों के लिए बोलने से नहीं कतराती थी। उन्हें यौन हिंसा और संपत्ति से जुड़े कानूनों को बदलने के लिए जाना जाता है। वह कानूनविदों और लोगों की एक आवाज थीं।

लीला दिल्ली हाइकोर्ट की न्यायाधीश और, हिमाचल प्रदेश हाइकोर्ट की मुख्य न्यायाधीश बनने वाली पहली महिला थीं। वे कई महत्व्वूपूर्ण कमीशनों का हिस्सा रहीं। वे 2012 में निर्भया गैंगरेप के बाद भारत में रेप कानूनों में बदलाव के लिए बनाई गई जस्टिस वर्मा कमेटी की सदस्य थीं। भारत के उत्तराधिकार कानून में साल 2020 में जो बदलाव हुए, जिसके तहत विरासत में मिलने वाली पैतृक संपत्ति में भी लड़कियों को बराबर का हिस्सा दिया गया, उस कानूनी बदलाव का पूरा श्रेय भी लीला सेठ को जाता है। 1958 में वह लंदन बार की परीक्षा में टॉप करने वाली पहली महिला थीं। वह विक्रम सेठ के उपन्यास ए सुटेबल बॉय की 19 साल की नायिका भी थीं, जिनकी मां अपनी बड़ी होती बेटी के विवाह के लिए फिक्रमंद हैं। वह लंदन से कानून की पढ़ाई कर हिंदुस्तान लौटी वो महिला वकील भी थीं, जिन्होंने फैमिली कोर्ट में प्रैक्टिस करने से इनकार कर दिया था। उन्होंने दस सालों तक पटना हाइकोर्ट में काम किया। साल 2003 में लीला सेठ की आत्मकथा प्रकाशित हुई थी 'On Balance', जिसकी भूमिका उनके बेटे और अंग्रेजी के नामी लेखक विक्रम सेठ ने लिखी है।

लीला अपनी आत्मकथा लिखने की वजह कुछ यूं बयां करती हैं, "मैं 73 की हो गई हूं और एक बार पलटकर अपनी जिंदगी को देखना चाहती हूं." 20 अक्तूबर, 1930 को लखनऊ के एक उच्च–मध्यवर्गीय परिवार में लीला सेठ का जन्म हुआ था। पिता रेलवे में थे। लीला अपनी आत्मकथा में लिखती हैं, "उस जमाने में बेटियों का पैदा होना बहुत खुशी की बात नहीं होती थी। हर किसी को बेटे का ही अरमान होता। लेकिन मेरे माता–पिता, जो पहले से ही दो बेटों के पैरेंट थे, बड़ी बेसब्री से एक बेटी के जन्म की कामना कर रहे थे। जब मैं पैदा हुई तो मेरे पिता ने अस्पताल में ही मानो जोर से सबको सुनाते हुए चिल्लाकर ये घोषणा की, मैं मेरी बेटी के लिए दहेज नहीं जुटाऊंगा। उसे बड़े होकर अपने पैरों पर खड़े होना होगा।" लीला अपनी आत्मकथा में लिखती हैं कि मेरे पिता वेस्टर्न कल्चर से काफी प्रभावित थे। वे ब्रिटिश सरकार की इंपीरियल रेलवे सर्विस में थे। मां भी मिशनरी स्कूल से पढ़ी थीं। दोनों पर ही सांस्कृतिक रूप से भारतीयता का उतना बोझ नहीं था। पिता ने बेटी को स्वतंत्र होकर सोचना, जीना और आत्मनिर्भर होना सिखाया। वो सिर्फ 11 साल की थीं, जब पिता का निधन हो गया। पिता के न रहने पर परिवार को काफी आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ा। लेकिन उनकी मां ने बेटी की पढ़ाई रुकने नहीं दी। लोरेटो कॉन्वेंट, दार्जिलिंग से स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद लीला कोलकाता में बतौर स्टेनोग्राफर काम करने लगीं। वहीं उनकी मुलाकात प्रेम सेठ से हुई, जिनसे बाद में उनका विवाह हुआ। विवाह के समय लीला की उम्र सिर्फ 20 साल थी। शादी के बाद वो अपने पति प्रेम सेठ के साथ लंदन चली गईं, जो उस वक्त बाटा में नौकरी करते थे। लंदन में जाकर वह अपनी पढ़ाई फिर से शुरू करना चाहती थीं। उन्होंने लॉ पढ़ने का फैसला किया। इसकी वजह ये थी कि बाकी कोर्स की तरह लॉ की पढ़ाई में रोज क्लास अटेंड करने की जरूरत नहीं थी। उनकी गोद में छोटा बच्चा था। उन्होंने घर–गृहस्थी और बच्चे की जिम्मेदारी संभालने के साथ–साथ अपनी पढ़ाई जारी रखी। 1958 में वह लंदन बार की परीक्षा में बैठीं और टॉप किया।

अगुआ

मैरी रॉय: जिन्होंने बेटियों को दिलाया हक

सीरियन क्रिश्चियन महिलाओं की जीत

अंग्रेजी की प्रसिद्ध लेखिका अरुंधति रॉय के नाम से कौन परिचित नहीं! वही अरुंधति रॉय, जिन्हें 'द गॉड ऑफ स्मॉल थिंग्स' के लिए 'बुकर प्राइज' (1997) मिला था। एक और मिस रॉय हैं, जिसका नाम है मैरी रॉय! मैरी रॉय को जब पिता की मृत्यु (1960) के बाद संपत्ति में समान अधिकार नहीं मिला, तो वह स्त्री विरोधी और भेदभावपूर्ण कानूनों के विरुद्ध लड़ने के लिए निकलती हैं और जिला अदालत से सर्वोच्च न्यायालय तक की 26 साल लंबी संघर्ष यात्रा करके ही घर लौटती हैं। सदियों पुराने कानून की संवैधानिक वैधता को चुनौती देकर, अपने अधिकार पाने का दुःसाध्य काम करने वाली मैरी रॉय, स्त्री अधिकारों की प्रमुख कार्यकर्ता भी हैं और सम्मानीय शिक्षक भी। शायद अधिकाँश पाठकों को यह जानकर आश्चर्य हो कि अरुंधति रॉय की माँ का नाम है मैरी रॉय। अरुंधति जब दो साल की थी तो मां मैरी रॉय और पिता राजीव रॉय के बीच विवाह विच्छेद हो गया था। मां मैरी रॉय केरल की सीरियन ईसाई और पिता बंगाली हिन्दू हैं।

मैरी रॉय ने 1983 में त्रावणकोर ईसाई उत्तराधिकार अधिनियम, 1916 की संवैधानिक वैधता को चुनौती देते हुए, अनुच्छेद 32 के तहत याचिका (नंबर 8260/1983) दायर की थी। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश पी.एन. भगवती और आर. एस. पाठक ने विद्वान् वकीलों की बहस और कानूनी प्रावधानों की गहन समीक्षा करने के बाद 24 फरवरी, 1986 को अपना ऐतिहा. सिक फैसला सुनाया, जिससे केरल की हजारों नहीं, लाखों औरतों को संपत्ति में समान अधिकार मिलने का रास्ता खुला।

मैरी रॉय के पिता पीवी इसहाक इंटोमोलॉजिस्ट थे, जिन्होंने हेरोल्ड मैक्सवेल–लेफ्रॉय के तहत इंग्लैंड में प्रशिक्षण लिया था और पूसा में इंपीरियल इंटोमोलॉजिस्ट बन गए। उनके पिता अपने पीछे कोई वसीयत नहीं छोड़ गए थे। उस समय त्रावणकोर ईसाई उत्तराधिकार अधिनियम, 1916 के मुताबिक, अगर कोई पिता अपनी बेटी के नाम वसीयत किए बिना मर जाता है तो उनकी संपत्ति पर सिर्फ बेटों का ही अधिकार होने का नियम था। बेटी पिता की किसी वस्तु पर अपना अधिकार नहीं जता सकती थी। मैरी ने इसी अधिनियम के खिलाफ आवाज उठाई। मेरी रॉय ने त्रावणकोर ईसाई उत्तराधिकार अधिनियम, 1916 की संवैधानिक वैधता को कोर्ट में चुनौती देने का फैसला लिया। इस लड़ाई में संपत्ति पर बेटी के समान अधिकार की बात करते हुए मैरी रॉय ने अनुच्छेद 14 का हवाला दिया। हालंकि निचली अदालत ने मुकदमे को ही खारिज कर दिया। इसके बाद भी मैरी ने लड़ाई जारी रही और केरल हाईकोर्ट में उन्होंने अपील की। सालों चले मुकदमे में उस समय मोड़ आया, जब केरल हाईकोर्ट ने उन्हें पक्ष में फैसला सुनाया और मैरी रॉय को पिता की आधी संपत्ति का अधिकार मिला। मैरी रॉय के पक्ष में आया ये फैसला इसलिए भी एतिहासिक था, क्योंकि आजाद भारत के इतिहास में पहली बार किसी विवाहित महिला को पिता की संपत्ति में बराबरी के अधिकार मिला था। इस फैसले के बाद त्रावणकोर सक्सेशन एक्ट में बदलाव हुआ। देश की सीरियन क्रिश्चियन महिलाओं को पिता की संपत्ति में समान अधिकार मिला। केरल हाईकोर्ट के फैसले के दायरे में भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 कोचिन में रहने वाले ईसाई आए। आजाद भारत में लड़कियों को सशक्त बनाने की दिशा में ये पहली जीत थी।

हालांकि सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद भी मैरी रॉय की कोर्ट–कचहरी का अंत नहीं हुआ। संपत्ति में एक–तिहाई हिस्सा मैरी रॉय की माँ का था, जो उनके जीवन काल तक ही रह सकता था। वे जिला अदालत से लेकर केरल उच्च न्यायालय (1994) तक के चक्कर लगाती रही। जिस भाई के खिलाफ मुकदमेबाजी करनी पड़ी, उसने (उसकी कम्पनी) 1984 में ही संपत्ति बैंक को गिरवी रख कर कर्ज उठा लिया था। जमीन का बंटवारा होने लगा, तो स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर जमीन का कब्जा लेने के नोटिस और धमकियां देने लगा। 2000 में अपनी मां की मृत्यु के बाद, उन्होंने अंतिम निर्णय के लिए कोट्टायम उप–अदालत का दरवाजा खटखटाया। यह मामला आठ साल तक जारी रहा, जिसके बाद 2009 में डिक्री अनुपालन की याचिका दायर करने के बाद ही संपत्ति मैरी रॉय को मिल पाई।

आपबीती

दिव्यांग बता पति ने छोड़ा, संघर्ष से पाया हक

नालंदा के गिरियक प्रखंड के रयतर गांव की अनीता देवी को अपने पति की संपत्ति में अधिकार पाने के लिए लंबी लड़ाई लड़नी पड़ी। दिव्यांग अनीता को उनके पति ने छोड़ दिया और दूसरी शादी कर ली। अनीता के सामने दो बेटों के साथ मायके लौटने के अलावा और कोई दूसरा रास्ता नहीं था। अनीता देवी बताती हैं कि शादी के समय ही ससुराल वालों को उनकी दिव्यांगता के बारे में बता दिया गया था। फिर भी दो बेटों के पैदा होने के बाद पति ने शारीरिक अपंगता का बहाना बनाकर छोड़ दिया। हालांकि मायके में पिता और भाई ने सहयोग किया और डेढ़ डिसमिल जमीन उन्हें दी जिसमें घर बनाकर वे अपने बच्चों के साथ रहने लगीं। लेकिन इतने में गुजारा होना मुश्किल था और उन्हें पति की तरफ से आर्थिक सहयोग की जरूरत थी। अनीता देवी ने पहले तो इसके लिए कोशिश की लेकिन जब कोई सहायता नहीं मिली तो 2007 में उन्होंने नव बिहार समाज कल्याण प्रतिष्ठान केंद्र, पावापुरी की शरण ली। बिहार में, और खासकर नालंदा में महिलाओं के अधिकारों के लिए काम कर रहा यह केंद्र कई ऐसी महिलाओं के न्याय की लड़ाई लड़ रहा है, जिन्हें सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक विधानों के नाम पर ठुकराया जा चुका है और उनके अधिकारों से वंचित किया जा चुका है। केंद्र से जुड़ी हुईं उषा कुमारी कहती हैं कि शुरुआत में 1200 महिलाएं इस संस्था से जुड़ी थीं जिनकी संख्या बढ़कर आज 7–8 हजार तक पहुंच चुकी है। 2007 में इसी के तहत महिला अधिकार मोर्चा बनाया गया जो उन महिलाओं के लिए आवाज उठाता है जो कहीं न कहीं अपने परिवार और समाज की सताई हुई हैं। अनीता देवी भी उन्हीं में से एक हैं। 2010 से ही लगातार प्रयास के बाद और संस्था से मदद मिलने के बाद पति पर दबाव बनाया गया और अंततः पति ने 5 कट्ठा जमीन उनके नाम कर दी। यह अनीता और उषा कुमारी जैसी महिलाओं के अथक संघर्ष का ही नतीजा है। आज अनीता देवी अपने दोनों बेटों के साथ गांव में ही एक आटा चक्की चलाती हैं और उसी से परिवार का गुजर बसर होता है। हालांकि उन्हें लगता है परिवार की जरूरतों के हिसाब से यह सहायता काफी नहीं है और उन्हें अपने पति और ससुराल से अधिक आर्थिक सहायता व सुरक्षा मिलनी चाहिए।

उषा कुमारी ने बताया कि अनीता की तरह ही कई और ऐसी महिलाएं हैं जिन्होंने घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ी और उनमें से कुछ को कामयाबी भी मिली तो कुछ की लड़ाई जारी है। अनीता की तरह ही गायत्री देवी के पति ने भी छोड़ दिया। गायत्री अपनी बेटी के साथ महिला अधिकार मोर्चा के पास आईं और कई प्रयासों के बाद उन्हें मायके में डेढ़ डिसमिल जमीन मिली। हालांकि पति की ओर से अभी भी उन्हें कोई सहायता नहीं दी जा रही है। गायत्री मजदूरी कर अपना और बेटी का गुजारा चला रही हैं। इसी तरह माखो देवी के पति ने भी उन्हें छोड़ दिया और कोई आर्थिक सहायता नहीं दी। उनके मामले में संघर्ष जारी है। बेबी कुमारी का मामला भी कुछ ऐंसा ही है। मोर्चा की सहायता से लंबी लड़ाई के बाद उन्हें ससुराल की संपत्ति में उनका अधिकार दिलाया जा सका।

आपबीती

लड़ी लड़ाई फिर जीत पाई

मेरा नाम नोरती है और मैं राजस्थान की रहने वाली हूं। मेरा बचपन बहुत कठिनाइयों में बीता। पिता शराब का नशा करते थे और अपनी सारी कमाई नशा करने में खर्च कर देते थे। मेरी और मेरे भाई की पढ़ाई भी छुड़वा दी गई क्योंकि फ़ीस देने के पैसे नहीं होते थे। मेरे लिए तो पिताजी ये भी कहते लड़की है क्या करेगी पढ़कर और जितना पढ़ेगी उतना दहेज देना पड़ेगा। उन्होंने मेरी शादी करने का फ़रमान सुना दिया। समाज के ठेकेदार भी हां में हां मिलाने लगे। वे लोग जिन्होंने पिता की नशे की बुरी आदत पर चुप्पी साध रखी थी और कभी हमारी मदद के लिए आगे नहीं आए, अब लड़का ढूंढने के काम में बढ़ चढ़कर हिस्सा ले रहे थे। मेरी शादी करवा दी गई यह कहकर कि लड़का दुकान का मालिक है। मैं जब ससुराल पहुंची तब मुझे पता लगा कि यह लड़का जो अब मेरा पति था, वो दुकान का मालिक नहीं बल्कि नौकर था। जो मेहनत करने के बजाए मेरे पिता की ही तरह शराब के नशे में पड़ा रहता। मुझे कहीं आना–जाना होता तो मैं सास से पैसे मांगती थी। सास भी अक्सर ऐसे ताने मारती थी कि मन दुःखी हो जाता था। मैं रोती थी कि आखिर मेरे पिता ने यह क्या कर दिया पहले मुझे अपना बोझ समझा और अब मैं सास–ससुर पर बोझ थी क्योंकि उनका बेटा निकम्मा था। विरोध करने पर मेरी पिटाई शुरू हो गई। मैं पूरे दिन घर के कामों में लगी रहती फिर भी परिवार में हर व्यक्ति मेरे साथ बुरा व्यवहार करता। मेरे ससुराल के घर के सामने 80 साल के एक अंकल जी रहते थे मुझसे कहते यहां रहोगी तो मर जाओगी। मुझे उनकी बात समझ नहीं आती थी।

एक दिन मुझे 'जागोरी' संस्था के लोग मिले, उन्होंने मुझे बताया यह हिंसा है और हिंसा को सहना हिंसा को बढ़ावा देना है। मैं जितना विरोध करती मेरे साथ उतनी ज़्यादा हिंसा होती। ससुराल में पति, ससुर, देवर सभी मेरे साथ मारपीट करते। फिर मैंने तय कर लिया कि 'अब मैं यह सब सहन नहीं करूंगी।' मैंने ससुराल छोड़ दिया, वापस माता–पिता के घर आ गई। लेकिन यहां भी मां–पिता, परिवार, समाज सबने कहना शुरू कर दिया। यह तुम्हारा घर नहीं, अब ससुराल ही तुम्हारा घर है। लगातार मुझे समझाने का सिल. सिला चलता रहा। संस्था द्वारा मेरी काउंसलिंग की गई। मैं बहुत उलझन में थी कि न माता–पिता का घर मेरा, न ससुराल का घर मेरा तो मेरा घर है कहां? घर, परिवार, समाज के तानों ने मुझे झकझोर दिया। मैंने भी ठान लिया कि मैं पराई कैसे हुई? जब माता–पिता ने भाई और मुझे दोनों को जन्म दिया है और अगर ये घर भाई का है तो मेरा भी है। इन सबके बीच मेरा एक बेटा भी हो गया। संघर्ष अब भी जारी था ससुराल का भी मायके का भी। लेकिन आखिरकार मेरी हिम्मत के आगे पिता को स्वीकारना पड़ा कि हां घर दोनों का है। अब एक ही घर में भाई–बहन दोनों का परिवार रहता है। नीचे मेरा भाई और उसका परिवार और पहली मंजिल पर मैं और मेरा बेटा। अब मैं निश्चिंत होकर अपने बेटे की परवरिश कर रही हूं और किसी पर बोझ नहीं हूं। लड़कर ही सही लेकिन मुझे मेरा हक़ मिला। 'हम सबला' से साभार

बेघर अब न रहेंगे

–कमला भसीन

बेघर न अब हम रहेंगे,
हमने तय कर लिया है।
डर–डर न अब हम जियेंगे,
हमने तय कर लिया है।
नाम घरवाली पर
घर के न घाट के
डर–डर के जीते जैसे
नौकर हो लाट के।
परजीवी न अब हम रहेंगे।
हमने तय कर लिया है।
बेघर न अब हम रहेंगे।
हमने तय कर लिया है।
अपना हो घर तो,
चले मर्ज़ी हमारी।
हमसे न सहे मारपीट,
नहीं सहे गारी।
हिंसा न अब हम सहेंगे,
हमने तय कर लिया है।
अपना हो घर तो होंगे,
खुशहाल बच्चे।
रिश्ते बनेंगे बराबर के सच्चे।
मेहमान बन के न रहेंगे,
हमने तय कर लिया है।
बेघर न अब रहेंगे
मां–बाप से लेंगे घर
भाइयों से लेंगे
बदले में उनको
सुरक्षा हम देंगे
न बनके पराए रहेंगे
हमने तय कर लिया है।
बेघर न अब हम रहेंगे।

आपबीती

बहनों को मरा बताकर संपत्ति हड़प ली

अपने अधिकार के लिए अदालती लड़ाई लड़ रही बहन की कहानी

कविता वीरेन्द्र दुबे

(समाज के अपवंचित वर्ग के बच्चों और महिलाओं के बीच लंबे समय से सक्रिय। उनकी शिक्षा और सेहत के लिए अभियान में शामिल।)

महिलाओं के अधिकारों की पैरवी करते हुए, जागरूकता फैलाते हुए मैं भूल ही गई थी कि मैं भी इसका शिकार हो सकती हूं। शादी के बाद परिवार में मेरे सामाजिक काम को सहयोग मिला और मैं सक्रिय हो गई। मायके में मेरे दादा बड़े किसान थे। उन्होंने अपनी खेती की 80 एकड़ जमीन और खंडवा शहर के बीचों–बीच मकान अपने बेटे यानी कि मेरे पिता गौरीशंकर पाठक के नाम कर दिया। हम पांच भाई–बहन में मेरे अलावा अनिल पाठक, शकुंतला अवस्थी, राजेश पाठक और संजय थे। इसमें अनिल और शकुंतला अब नहीं रहे। पिताजी ने जमीन और मकान अपने पांचों बच्चों के बीच बांटने का लिख दिया था। लेकिन पिता की मृत्यु के बाद भाइयों ने जमीन बेच दी और दो–दो लाख रुपए बहनों को देकर बहनों से अनापत्ति प्रमाण पत्र पर हस्ताक्षर करवा लिए। बहनों से कहा गया कि बाकी पैसे मिलने पर और पैसे दे देंगे। लेकिन बहुत समय तक टालमटोल चलता रहा और अंततः पैसे उन्होंने आपस में बांट लिए।

2014 में नया घपला हुआ जब पता चला कि शहर का मकान मंझले भाई राजेश पाठक ने स्व. पिता के नकली दस्तखत से अपने बेटे अनंत पाठक के नाम करवा लिया। इसके लिए हिस्सेदारों के इंदौर के फर्जी पतों पर नोटिस दिलाए गए जबकि वे भोपाल, पिपरिया और रायपुर में थे। वहां से नकली दस्तखत की पावती के साथ–साथ अनापत्ति के कागज भी तैयार करवा लिए। इस हस्तांतरण की सूचना एक साधारण लोकल न्यूज पेपर में छपवा दी जिसका सर्कुलेशन ही नहीं है। उन्होंने इस फर्जीवाड़े की खबर तक नहीं लगने दी।

संयोग से किसी नातेदार से इस बारे में मालूम हुआ तो नगर निगम खंडवा से जानकारी जुटाई गई और फर्जीवाड़ा उजागर हो गया। अब यह मामला खंडवा की अदालत में चल रहा है। इसने मुझे हिलाकर रख दिया। संपत्ति में बेटियों के हक के लिए कानून बनने के बाद से हम औरतों में जो जागरूकता आई है उसे पचा नहीं पा रहा है हमारा समाज। इस फर्जीवाड़े से मंझले भाई की हरकतें उजागर हुईं। मकान में वह रहता ही था। उसको तुड़वाकर दुकानें बनवा लीं, मकान का अधिकांश हिस्सा किराए पर लगा दिया। उसने तो यहां तक कहा कि भाई–बहन मर चुके हैं। सबके मन–मुताबिक संपत्ति उसके बेटे को दादा ही दे गए थे। पिताजी के फर्जी दस्तखत करके कागज बनवा लिया। वह बरसों तक खुद को परिवार का हितैषी बताकर, खुद को गरीब बताकर सबको ठगता रहा। अगर मामला सामने नहीं आता तो हम सबको कभी यकीन नहीं होता कि हमारा भाई हमारे साथ ऐसा भी कर सकता है।

अब अपनी सच्ची कहानी के जरिये मैं उन बहनों को आगाह करने के काम में लगी हूं जो इस तरह के मुद्दों पर उदासीन रहती हैं। जब हम पढ़ी–लिखी जागरूक महिलाओं के साथ ऐसा हो सकता है तो लाखों, अपढ़, जानकारियों से दूर बहनों के साथ कितना अन्याय हो रहा होगा। अपनी कहानी के जरिये, तो पूरी तरह से सच है और न्यायालय में विचाराधीन है, मैं बताना चाहती हूं कि करोड़ों की संपत्ति हड़पने के लिए लोग किस हद तक जा रहे हैं। भावनाओं में बहकर अपने कानूनी अधिकारों को न छोड़ें। बेटी और बेटे दोनों को पिता की संपत्ति में बराबर का अधिकार मिला है। इसे हासिल करना हमारा अधिकार भी है और कर्तव्य भी।

ऐप एक काम अनेक
पटना शहर को साफ स्वच्छ बनाने के लिए
'क्लीन पटना ऐप' डाऊनलोड करें
GET IT ON Google Play
Clean Patna App डाऊनलोड करे
CITIZEN GRIEVANCE APP
Welcome to Patna Smart City
Raise Complaint
Complaint Status
Track Vehicles
View Bills
Toll Free
Near Me
Responsible Person
Sos
अपनी शिकायत का स्टेटस जानें
शिकायत दर्ज करें
गाड़ी को ट्रैक करें
बिल देखें
हेल्पलाइन नंबर
155304
स्वच्छ पटना शहर अपना
कुछ हम करें, कुछ आप करें
पटना नगरपालिका
CITY OF PATNA
पटना नगर निगम द्वारा जनहित में जारी

अपने शहर को रखें साफ
पटना नगरपालिका
CITY OF PATNA
हेल्पलाइन नंबर 155304
पटना नगर निगम द्वारा जनहित में जारी
SWACHH SURVEKSHAN 2022
कुछ हम करें, कुछ आप करें
स्वच्छ पटना शहर अपना

टूट रहे परिवार

बढ़ रहे संपत्ति से बेदखली के मामले

आज के समय में अखबारों में माता–पिता द्वारा अपने बच्चों को संपत्ति से बेदखल करने के मामले तेजी से बढ़ रहे हैं। बच्चों की बढ़ती लालसा या बड़ों के मन में उपजी असुरक्षा, दोनों ही इसके कारण हो सकते हैं। ऐसी स्थिति कमोबेश देश के हर हिस्से में है। पढ़ते हैं पंजाब से आई ऐसी ही एक रिपोर्ट–

रोजाना अखबारों में बढ़ते बेदखली के मामले चिंता का विषय बनते जा रहे हैं। जानते हैं कुछ ऐसी वजहें जिनके कारण अभिभावक अपने बच्चों से नाता तोड़ने का बड़ा फैसला तक कर लेते हैं।

बेरोजगारी भी बड़ा कारण– अंबाला के रिटायर्ड टीचर, मास्टर मदनलाल शर्मा के अनुसार 20 साल पहले ऐसा नहीं होता था। इसके पीछे बेरोजगारी सबसे बड़ा कारण है। बेरोजगार युवक–युवतियां खाली बैठे–बैठे खुरापात सोचते हैं, लालसा बढ़ती है लेकिन हाथ में कुछ नहीं आता तो वे नशे की ओर भी अग्रसर हो जाते हैं। कई बार बेटे की तनख्वाह ज्यादा बोलकर रिश्ता कर दिया जाता है जब सच बहू के सामने आता है तो उसका सास–ससुर से टकराव होने लगता है। मां–बाप से अलग होना और प्रापर्टी में हिस्सा मांगने के कारण माता–पिता अपने बेटे–बहू को अपनी जायदाद से बेदखल कर देते हैं। बहू द्वारा दहेज का झूठा केस डालकर पैसा ऐंठने की सोच, नशे के अलावा सहनशीलता की कमी भी इसके पीछे अहम वजह है। कई बार पैसा मांगने वाले जब माता–पिता के घर तक पहुंचने लगते हैं तो वे बेटे को जायदाद से बेदखल करके अपना पीछा छुड़ाते हैं।

केस 1: – कुरुक्षेत्र के जगदीश लाल ने अपने बेटे को गलत संगत में फंसने और बात न मानने पर बेदखल कर दिया। उनका कहना है कि उन्होंने मन पर पत्थर रखकर ऐसा किया, लेकिन अपनी जायदाद बचाने के लिए ऐसा करना मजबूरी थी।

केस 2: – हालांकि ऐसे केस बहुत कम आते हैं कि मां–बाप अपनी बेटी को बेदखल करते हों। अंबाला के एक पिता ने अपनी बेटी को इसलिए बेदखल किया क्योंकि वह घर से भाग गई थी और अपनी मर्जी से शादी करना चाहती थी।

केस 3: – चंडीगढ़ के विशाल ने अपने बहू–बेटा के अलावा अपने दोनों पोतों को भी बेदखल कर दिया। कारण बहू–बेटे की करतूतें, लेकिन मजबूरी में दोनों पोतों को भी बेदखल करना पड़ा।

केस 4: – होशियारपुर निवासी सुरेंद्र का कहना है कि उनका बेटा हर बिजनेस में फेल हो रहा था। काफी समय तक तो वे मदद करते रहे, लेकिन बेटे ने पिता के नाम पर उनके दोस्तों और संबंधियों से पैसा लेना शुरू कर दिया। इसके बाद उनके पास बेटे से संबंध तोड़ने के सिवा कोई रास्ता नहीं बचा।

चंडीगढ़ के दुकानदार विकास का कहना है कि उसे तो केवल इसलिए पिता ने बेदखल कर दिया कि उसने बिजनेस के लिए पापा से पैसे मांगे थे। पैसे देना तो दूर उन्होंने उसे बिना बताए अपनी संपत्ति से बेदखल कर दिया। अंबाला में विज्ञापन एजेंसी चलाने वाले विकेश पुनयानी का कहना है कि पहले जहां सप्ताह में 1–2 मामले बेदखली के आते थे अब रोजाना 1–2 मामले आने लग गए हैं। इसी तरह करनाल विज्ञापन एजेंसी के अंकुश का कहना है कि माह में 30–40 माता–पिता अपने बच्चों को बेदखल कर रहे हैं। ऐसे ही हर जिले में 20–25 बेदखली के मामले आ रहे हैं।

क्यों बढ़ रहे हैं मामले

पंजाब–हरियाणा हाईकोर्ट के वकील विकास चतरथ का कहना है कि मेट्रीमोनियल डिस्प्यूट इसके पीछे खास वजह है। बेटे–बहू के बीच चल रहे पारिवारिक झगड़े से पैदा हुए हालातों से निबटने के लिए ही पेरेंट्स ऐसा करते हैं। बहुओं द्वारा झूठे दहेज उत्पीड़न या किसी दूसरे आरोप में भी अभिभावकों को फंसाए जाने के बढ़ते मामलों के कारण अभिभावक बेटे–बहू से रिश्ता तोड़ने की सार्वजनिक सूचना दे देते हैं। क्योंकि ऐसे केसों में उनके बेटे के साथ–साथ उन्हें भी आरोपी बनाया जा सकता है। ऐसे नोटिस के बाद अभिभावक केवल उसे उस संपत्ति से बेदखल कर सकते हैं, जो उन्होंने खुद अर्जित की है लेकिन पुश्तैनी संपत्ति से नहीं।

रोहतक की सुनीता ने बताया कि उसका बेटा गलत संगत में पड़ गया था और उसने एक माह पहले मां की मर्जी के खिलाफ शादी कर ली। अगले ही दिन सुनीता ने एक समाचार पत्र में पब्लिक नोटिस जारी किया कि उसने अपने बेटे से सारे संबंध तोड़ लिए हैं। इसके बावजूद पति–पत्नी में लड़ाई होने पर पुलिस उसके घर भी आई। ऐसे में उसे कोर्ट से औपचारिक डिक्री लेने की जरूरत महसूस हुई। जब कोई शख्स अपने बच्चे से संबंध तोड़ने के लिए पब्लिक नोटिस देने का फैसला करता है, तो वह वकील के पास जाता है। वकील अपने लेटर हेड पर एक मैटर तैयार करता है। इसमें मुवक्किल का नाम, पता, उस शख्स का नाम, जिससे संबंध तोड़ा जा रहा है आदि जानकारियां होती हैं।

श्रोतः www.amarujala.com

एकल महिला

तलाक के बाद संपत्ति में पत्नी के अधिकार

आपसी सहमति से तलाक के मामले में, यदि संपत्ति पति के नाम पर है, तो कानून की नजर में, संपत्ति पर पत्नी का कोई अधिकार नहीं है। पंजीकरण अधिनियम (रजिस्ट्रेशन एक्ट), 1908 के अनुसार, संपत्ति उस व्यक्ति की होती है जिसके नाम से संपत्ति पंजीकृत की गई है। जब बैंक की बात आती है, तो संपत्ति उस व्यक्ति की होती है जिसके नाम से ऋण लिया गया है और जो ऋण की किश्तों का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है।

यहां तक कि अगर पत्नी ने घर बनाने में आर्थिक रूप से योगदान नहीं दिया है, तो भी पति को उसे घर छोड़ने के लिए कहने का कोई अधिकार नहीं है जब तक कि सक्षम प्राधिकारी (अथॉरिटी) द्वारा कानूनी रूप से तलाक नहीं दिया जाता है। उसे तब तक घर में रहने का अधिकार है जब तक कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा उनका तलाक नहीं कर दिया जाता। तलाक के बाद, पत्नी को अपने और अपने बच्चों के लिए भरण–पोषण और आजीविका की लागत मांगने का अधिकार है, हालांकि, वह तलाक के समझौते में संपत्ति की मांग नहीं कर सकती है। उदाहरण के लिए, शादी के बाद पति अपनी पत्नी के लिए और खुद के लिए एक अपार्टमेंट खरीदता है, और यह अपने नाम पर पंजीकृत है। शादी के दौरान पति–पत्नी एक साथ एक अपार्टमेंट में रहते थे। हालांकि, जब तलाक का मुद्दे आता है, तो पत्नी उस अपार्टमेंट के सभी अधिकार खो देगी, जबकि पति का उस पर पूरा स्वामित्व (ओनरशिप) होगा। थोड़े अलग परिदृश्य में, जहां पत्नी और पति ने एक साथ अपार्टमेंट खरीदा है लेकिन यह पति के नाम पर पंजीकृत है, पत्नी उस पर दावा नहीं कर सकती है। हालांकि, वह बैंक स्टेटमेंट और अन्य सबूतों के माध्यम से संपत्ति खरीदने में अपनी आर्थिक सहायता दिखा सकती है।

संयुक्त संपत्ति में तलाक के बाद पत्नी के संपत्ति अधिकार

ऐसे कई कारण हैं जिनकी वजह से पति–पत्नी संयुक्त संपत्ति खरीदते हैं जैसे कर (टैक्स) बचत, आसान बचत या जहां दोनों घर खरीदने में योगदान करते हैं। जहां संपत्ति संयुक्त संपत्ति के रूप में पंजीकृत है, तलाक के मामले में महिला को संपत्ति में हिस्सेदारी का दावा करने का अधिकार है। योगदान की राशि और प्रतिशत के अनुरूप, अदालत उसे तलाक के समझौते के हिस्से के रूप में एक हिस्सा दे सकती है।

महिला के संपत्ति अधिकारों के लिए, उसे अपने पति के नाम पर संपत्ति अर्जित करने के लिए अपने योगदान के दस्तावेज प्रस्तुत करने होंगे। अपने अधिकारों का दावा करने के लिए, वह अपने खाता की स्टेटमेंट प्रदान कर सकती है। यदि पति–पत्नी एक साथ घर खरीदते हैं, तो इसे संयुक्त स्वामित्व माना जाता है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 (हिंदू सक्सेशन एक्ट) के अनुसार, एक सह–मालिक के रूप में, महिला को तलाक को अंतिम रूप दिए जाने और तलाक की संपत्ति में समझौते को खत्म होने

तक संपत्ति में रहने का अधिकार है। इसे सतीश आहूजा बनाम स्नेहा आहूजा (2020) के मामले में उच्च न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की बेंच द्वारा भी स्थापित किया गया है। इसमें, महिला के ससुर ने महिला को तुरंत घर से बाहर जाने के लिए निषेधाज्ञा (इंजेक्शन) का मामला दर्ज कराया। उनके द्वारा यह विरोध किया गया था कि संपत्ति न तो बेटे की थी और न ही उसकी बहू की। यहां, अदालत ने यह माना कि महिला के पति के हिस्से की परवाह किए बिना, महिला को निवास का अधिकार था।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1956 की धारा 27

यह धारा अदालत को संपत्ति के मामलों पर निर्णय लेने का अधिकार देती है जो विवाह के समय पति–पत्नी को संयुक्त रूप से प्रस्तुत किए जाते हैं। हालांकि, पति–पत्नी अपने विवाह के अस्तित्व के दौरान जो संपत्तियां खरीदते हैं, वे इस प्रावधान के तहत कवर नहीं की जाएंगी।

यदि पति या पत्नी में से कोई एक इस धारा के तहत आदेश प्राप्त करना चाहता है, तो उसे तलाक की कार्यवाही समाप्त होने से पहले एक आवेदन करना होगा। हालांकि, संयुक्त रूप से या व्यक्तिगत रूप से स्वामित्व वाली किसी अन्य संपत्ति से संबंधित आदेश देने का न्यायालय के पास कोई अधिकार क्षेत्र (जुरिस्डिक्शन) नहीं है। यदि दोनों पक्ष ऐसी संपत्ति के संबंध में समझौता करते हैं, तो अदालत उसका रिकॉर्ड रख सकती है। हालाँकि, कम्पटा प्रसाद बनाम ओमवती (1971) के मामले में भी एक विपरीत दृष्टिकोण देखा गया है जहाँ इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने स्थापित किया कि यह सही नहीं है।

सत्यपाल बनाम सुशीला (1983) के मामले में यह पाया गया कि पति से आभूषण और अन्य सामान की वसूली के उद्देश्य से इस धारा के तहत पत्नी का आवेदन विचारणीय (मेंटेनेबल) नहीं था। बासुदेव बनाम छाया (1991) में यह पाया गया कि पत्नी को विवाह खत्म होने तक ससुराल में रहने का अधिकार है।

अगर पति पत्नी को तलाक नहीं देता है लेकिन पत्नी को छोड़ देता है

एक पति द्वारा अपनी पत्नी को छोड़ने और तलाक नहीं लेने की असंभावित स्थिति में, महिलाओं के संपत्ति के अधिकार में कहा गया है कि उनके बच्चों के साथ–साथ उन्हें भी अपने पिता की संपत्ति पर हिस्सा घोषित करने का अधिकार है। यदि पति के किसी अन्य महिला से बच्चे हैं, तो उन्हें आनुपातिक रूप से संपत्ति का अधिकार है। यदि कोई संपत्ति मौजूद है जो पति के स्वामित्व में है, तो पहली पत्नी और उसके बच्चों का उस संपत्ति पर प्रारंभिक अधिकार होगा जो उनके जैविक पिता के स्वामित्व में है।

इस मामले में, पिता/पति संपत्ति का चौथा शेयरधारक (शेयरहोल्डर) बन जाता है, और दूसरी शादी से बच्चे, साथ ही दूसरी पत्नी, पिता के हिस्से से पूरी तरह से अपने हिस्से का दावा करेंगे। पूरा हिस्सा पाने के लिए पहली पत्नी के तलाक की संपत्ति के समझौते के बाद ही दूसरी पत्नी को शादी करनी चाहिए। नतीजतन, दूसरी पत्नी को कानूनी रूप से विवाहित महिला के रूप में माना जाता है, और वह और उसके बच्चे केवल महिलाओं के संपत्ति अधिकारों का दावा तभी कर सकते हैं जब वे रिश्ते में हों।

तलाक के दौरान अर्जित संपत्तियों पर स्टांप शुल्क

विभिन्न पक्षों के बीच संपत्ति के हस्तांतरण पर कर लागू होते हैं। उदाहरण के लिए, जब संपत्ति को भाई–बहनों के बीच स्थानांतरित किया जाता है, तो कर उसी तरह लागू होते हैं जैसे खुले बाजार में बिक्री में कर लागू होता है। हालांकि पति–पत्नी के बीच हस्तांतरित संपत्ति को दीर्घकालिक पूंजीगत लाभ कर से छूट दी गई है। भले ही तलाकशुदा पति या पत्नी के बीच संपत्ति के हस्तांतरण की बात आती है, लेकिन ऐसी कोई स्टांप ड्यूटी रियायतें नहीं हैं, चीजें अलग हैं। ऐसे मे उन्हें संपत्ति को अपने संयुक्त नाम से एकल भागीदार के नाम में बदलने की आवश्यकता है।

स्त्रीधन

स्मृतिकारों के अनुसार ये वह संपत्ति हैं जो स्त्री को विवाह के समय उपहार में दी जाती हैं। इनमें आभूषण, नकद आदि शामिल हो सकते हैं। तलाक के बाद भी इन संपत्तियों पर पत्नी का अधिकार होता है। हालांकि, ऐसे मामलों में जहां पति ने इन उपहारों को खरीदने में योगदान दिया है, उसे भी तलाक के बाद अपनी हिस्सेदारी का दावा करने का अधिकार है। विभाजन के हिस्से के रूप में महिलाओं द्वारा अर्जित कोई भी संपत्ति स्त्रीधन नहीं बल्कि महिलाओं की संपत्ति होगी जैसा कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा डेबी मंगल प्रसाद सिंह बनाम महादेव प्रसाद सिंह के मामले में कहा गया था। हालाँकि, 1956 के हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के बाद, अधिनियम की धारा 14 द्वारा यह घोषित किया गया था कि विभाजन द्वारा प्राप्त संयुक्त संपत्ति एक पूर्ण संपत्ति या स्त्रीधन है। पूर्ण संपत्ति के मालिक के रूप में, एक महिला का उसके अलगाव पर पूरा नियंत्रण होता है, जिसका अर्थ है कि वह सम्पत्ति को दे सकती है, बेच सकती है, पट्टे (लीज) पर दे सकती है, व्यापार कर सकती है, गिरवी रख सकती है या वह जो कुछ भी चाहती है वह कर सकती है।

दूसरी शादी

दूसरी पत्नी और बच्चों के अधिकार

दूसरी पत्नी के संपत्ति पर अधिकार के बारे में जानने से पहले यह पता करना जरूरी है कि दूसरी शादी की कानूनी वैधता क्या है। हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के तहत एक से ज्यादा शादी पर बैन है। हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के सेक्शन 5 के मुताबिक शादी के वक्त किसी भी पक्ष का जीवित जीवनसाथी नहीं होना चाहिए. अगर यह स्थिति नहीं होती तब दूसरी पत्नी का पति की संपत्ति पर न तो कोई हक होगा और न ही उसे कोई हिस्सा मिलेगा. इसके अलावा, अगर दूसरी शादी वैध है यानी पति ने पहली पत्नी की मृत्यु के बाद या फिर पहली पत्नी को तलाक देकर शादी की हो तब दूसरी पत्नी को संपत्ति में वही अधिकार मिलेंगे, जो पहली पत्नी के थे। यह पति की खुद बनाई संपत्ति या पैतृक संपत्ति दोनों पर लागू होता है।

पहली और दूसरी पत्नी और उनकी संतानों के संपत्ति अधिकारों से संबंधित कानून अत्यधिक बारीक हैं और फैसले को न्यायपूर्ण तरीके से वैध बनाने के लिए जज को कई सरकारी कानून लगाने पड़ते हैं।

केस–1

जब पहली पत्नी को बिना तलाक दिए पति दूसरी शादी कर ले तो पहली पत्नी और उसके बच्चे प्रॉपर्टी पर दावा कर सकते हैं। पति की मौत के बाद प्रॉपर्टी को समान रूप से पहली पत्नी और उसके बच्चों, दूसरी पत्नी के बच्चों और कुछ खास मामलों में दूसरी पत्नी के बीच बांटा जाएगा। हालांकि इस स्थिति में दूसरी पत्नी के अधिकारों को लेकर अनिश्चितता है।

केस–2

जब पहली पत्नी की मौत के बाद पति दूसरी शादी कर ले तो पहली शादी से हुए बच्चों के अलावा दूसरी पत्नी और उसके बच्चों को पिता की मौत के बाद प्रॉपर्टी में समान हिस्सा मिलेगा।

केस–3

जब पति पहली पत्नी को तलाक देकर फिर शादी करता है तो पहली पत्नी को छोड़कर, पहली शादी से बच्चे, दूसरी पत्नी और उससे हुए बच्चों को पिता की संपत्ति में बराबर हिस्सा मिलेगा।

केस–4

अगर प्रॉपर्टी पति और पहली पत्नी दोनों के नाम पर है तो यह वैवाहिक संपत्ति बन जाती है।

दूसरी शादी के बाद प्रॉपर्टी, पति की मौत के बाद पहली पत्नी और उनके नामांकित लाभार्थियों के स्वामित्व में ही रहेगी। फिर भी, दूसरी शादी के बच्चे हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम का हवाला देते हुए संपत्ति में हिस्सेदारी का दावा कर सकते हैं। पहली पत्नी की मौत के बाद, दूसरी पत्नी प्रॉपर्टी में हिस्से का दावा कर सकती है।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के मुताबिक ये लोग मृतक शख्स के क्लास–1 उत्तराधिकारी होते हैं। बेटा, बेटी, विधवा, मां, मरे हुए बेटे का बेटा, मरे हुए बेटे की बेटी, मरे हुए बेटे की विधवा, मरी हुई बेटी का बेटा, मरी हुई बेटी की बेटी, मरे हुए बेटे का बेटा, मरे हुए बेटे के मरे हुए बेटे की बेटी, मरे हुए बेटे के मरे हुए बेटे की विधवा। लिहाजा पहली और दूसरी शादी से हुए बच्चों का मृतक शख्स की अचल, खुद कमाई हुई संपत्ति और विरासत में मिली संपत्तियों पर समान अधिकार होता है। हिंदू मैरिज एक्ट 1955 के मुताबिक पहली पत्नी को तलाक दिए बिना दूसरी शादी करना अवैध है। लिहाजा अगर पति बिना कोई वसीयत छोड़े मर जाता है तो ऐसी स्थिति में दूसरी पत्नी मृतक पति की संपत्ति पर कोई दावा नहीं कर सकती। हालांकि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के तहत, शादी से हुए बच्चों को हिंदू विवाह अधिनियम, 1956 की धारा 16 के अनुसार वैध माना जाएगा और अगर पिता की मौत हो जाती है, तो क्लास–1 कानूनी उत्तराधिकारी के रूप में पिता की संपत्ति पर उनका अधिकार होगा। हालांकि दूसरी पत्नी के पिछली शादियों से हुए बच्चे अपनी मां के मौजूदा मृतक पति की संपत्ति पर कोई दावा नहीं कर सकते। इसलिए, दूसरी पत्नी के संपत्ति के अधिकार उसकी शादी की कानूनी स्थिति पर निर्भर हैं।

पत्नी के अधिकार

शादी करने से ही नहीं मिल जाता हक

एक शादीशुदा महिला को अपने पति की अर्जित की गई संपत्ति पर कोई भी अधिकार तब तक नहीं होता है जब तक उसका पति जीवित होता है। महिला को अधिकार तब ही मिलेगा जब उसे संपत्ति में सहस्वामी के रूप में जोड़ा जाए।

भारत में कानून को लेकर बहुत सारी भ्रांतियां हैं। उनमें एक भ्रांति यह भी है कि एक महिला को उसके पति की संपत्ति में अधिकार होता है या फिर पति के माता–पिता की संपत्ति में कोई अधिकार होता है। इस मामले में भारत का कानून अत्यंत स्पष्ट है।

क्या है कानून

संपत्ति के उत्तराधिकार के मामले में भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम और मुस्लिम पर्सनल लॉ में उत्तराधिकार के नियम लागू होते हैं। किसी भी व्यक्ति की संपत्ति दो प्रकार की होती है। पहली प्रकार की वह संपत्ति होती है जो उसमे स्वयं अर्जित की है और दूसरी प्रकार की वह संपत्ति है जो उसे पैतृक रूप से मिली है। कोई भी ऐसी महिला जिसने किसी ऐसे व्यक्ति से शादी की है जिसने कुछ संपत्तियां अर्जित की है उस व्यक्ति की संपत्ति में उस महिला का अधिकार होता है या नहीं यह मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। इन सवालों के जवाब हमें मामले की परिस्थिति, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम और मुस्लिम पर्सनल लॉ के अंतर्गत मिलते हैं। जैसा कि यह स्पष्ट है कि जब कोई भी व्यक्ति किसी संपत्ति को स्वयं अर्जित करता है तब उस व्यक्ति का उस संपत्ति पर पूर्ण रूप से अधिकार होता है। वह संपत्ति के संबंध में कोई भी निर्णय ले सकता है चाहे उसकी संपत्ति अचल संपत्ति हो या चल हो। कोई सोना–चांदी हो या फिर जमीन या मकान हो। किसी भी प्रकार की संपत्ति में उसे ही अधिकार प्राप्त होते हैं तथा उसके अधिकारों में कोई दूसरा व्यक्ति घुसपैठ नहीं कर सकता है। अब भले ही उसकी पत्नी हो या उसके बच्चे हो। यदि संपत्ति स्वयं अर्जित की गई है तब उस व्यक्ति की संपत्ति पर केवल उसी का अधिकार होगा। वह संपत्ति को बेच भी सकता है, दान भी दे सकता है या वसीयत भी कर सकता है।

पति के जीवित रहते कोई अधिकार नहीं

एक शादीशुदा महिला को अपने पति की अर्जित की गई संपत्ति पर कोई भी अधिकार तब तक नहीं होता है जब तक उसका पति

पत्नी के अधिकार

जीवित होता है। उसके पति के जीवन काल में पत्नी के पास में संपत्ति में किसी प्रकार का कोई अधिकार नहीं होता है। उसके पति के मर जाने के बाद भी यदि उसका पति संपत्ति किसी अन्य व्यक्ति को वसीयत कर दें तब उस वसीयतदार उत्तराधिकारी को संपत्ति में अधिकार होगा और पत्नी को संपत्ति में कोई अधिकार नहीं होगा।

शादी के समय अनेक महिलाएं यह समझती है कि किसी व्यक्ति से शादी कर लेने पर उसकी अर्जित की गई संपत्ति पर उस महिला का भी अधिकार हो गया जबकि यह ठीक बात नहीं है। उस महिला को संपत्ति में अधिकार तब ही मिलेगा जब उसको संपत्ति में सहस्वामी के रूप में जोड़ दिया जाए। जैसे कि यदि कोई खेत किसी व्यक्ति के पास में है और उस व्यक्ति से किसी महिला की शादी की गई है तब उस व्यक्ति के नाम पर जो खेत है उसके स्वामी के रूप में पत्नी का नाम भी जोड़ दिया जाना। ऐसा नाम दान पत्र के माध्यम से जोड़ा जा सकता है अर्थात पति यह कह सकता है कि उसने संपत्ति का आधा हिस्सा अपनी पत्नी के पक्ष में दान कर दिया है तब उसकी पत्नी को उस संपत्ति में सह स्वामित्व प्राप्त हो जाता है परंतु बगैर दान के महिला को किसी प्रकार का कोई अधिकार प्राप्त नहीं होगा। एक महिला अपने पति से केवल भरण–पोषण की राशि प्राप्त कर सकती है तथा तलाक के समय समस्त जीवन के लिए एकमुश्त भरण–पोषण की राशि जिसे एल्यूमिनी कहा जाता है प्राप्त कर सकती है परंतु संपत्ति में कोई क्लेम नहीं कर सकती है।

सास–ससुर की संपत्ति में हक

इसी प्रकार सास–ससुर की संपत्ति में भी एक शादीशुदा महिला को किसी प्रकार का कानूनी अधिकार उपलब्ध नहीं होता है। जब तक सास–ससुर जीवित हैं तब तक महिला किसी प्रकार का क्लेम नहीं कर सकती और उनके मर जाने के बाद ही महिला कोई क्लेम नहीं कर सकती। यहां पर महिला का पति संपत्ति का हिस्सेदार होता है परंतु यदि पति की मृत्यु पहले ही हो चुकी है और फिर सास–ससुर की मृत्यु होती है, ऐसी स्थिति में पत्नी के पास उत्तराधिकार आ जाता है तथा तब एक मरे हुए व्यक्ति की विधवा अपने मरे हुए सास–ससुर की संपत्ति में अधिकार प्राप्त कर लेती है परंतु यह तभी संभव है जब उनके द्वारा संपत्ति के संबंध में किसी प्रकार की कोई वसीयत किसी अन्य व्यक्ति को नहीं की गई हो।

पति की मृत्यु पर पत्नी का हक

जब एक महिला का पति बगैर किसी वसीयत के अपनी स्वयं अर्जित की गई संपत्ति को छोड़ कर मर जाता है ऐसी स्थिति में उसकी संपत्ति पर उसकी पत्नी और साथ में उसकी मां भी जीवित हो तो उसका भी अधिकार होता है और उसी के साथ उसके बच्चों का भी अधिकार होता है। यहां पर उत्तराधिकार के मामले हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 तथा मुस्लिम पर्सनल लॉ जो मुसलमानों के मामले में लागू होता है, के नियम लागू होते हैं। इन कानूनों के नियमों से संपत्ति का उत्तराधिकार तय होता है। जैसे कि मान लिया जाए एक हिंदू व्यक्ति अपना एक मकान छोड़कर मर जाता है जिस मकान की कीमत 1,00,000 रुपए है। वह व्यक्ति अपने पीछे अपनी मां, अपने भाई, अपनी बहन और अपनी विधवा पत्नी को छोड़कर मर जाता है। इस स्थिति में उस व्यक्ति की अर्जित की गई संपत्ति में उसके भाई और बहन का कोई अधिकार नहीं होगा परंतु उसकी विधवा और उसकी माता दोनों को ही संपत्ति में समान रूप से अधिकार होगा। इसका उल्लेख हमें हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के अंतर्गत प्राप्त होता है जहां पर बगैर वसीयत किए गए किसी हिंदू व्यक्ति के मरने पर उसके वारिसों को मिलने वाली संपत्ति के उत्तराधिकार के संबंध में उल्लेख किया गया है। इन सभी बातों से यह तय होता है कि कोई भी विवाहित महिला को अपने पति और अपने सास–ससुर की संपत्ति में उनके जीवित रहते हुए किसी प्रकार का कोई अधिकार नहीं होता है परंतु यदि उनकी मौत हो जाती है और वह बगैर वसीयत के मर जाते हैं तब उस महिला का अधिकार पैदा हो जाता है और तब वह महिला अपने पति की संपत्ति में अपने उत्तराधिकार के लिए क्लेम कर सकती है परंतु उनके जीवित रहते उसका कोई अधिकार नहीं है। पत्नी केवल अपने लिए भरण–पोषण की मांग कर सकती है उसके अतिरिक्त वे किसी प्रकार की अपने पति की संपत्ति में कोई क्लेम नहीं कर सकती है। इसलिए यहां पर ध्यान देना चाहिए कि संभव हो सके तो विवाह के समय महिला के पक्ष में किसी संपत्ति को दान के रुप में लिखवाया जाना चाहिए तथा उसे संपत्ति का मालिक बनाया जाना चाहिए क्योंकि किसी भी व्यक्ति के जीवन में एक महिला का भी त्याग होता है और यदि वे कामकाजी नहीं है तब किसी संपत्ति की मालिक नहीं रह जाती है और उसके बाद केवल भरण पोषण का अधिकार मात्र ही रह जाता है।

बिहार सरकार

समाज में सुधार लाएंगे
मिलकर बाल विवाह, दहेज-प्रथा मिटाएंगे

बाल विवाह, दहेज उत्पीड़न से जुड़ी शिकायत के लिए महिला हेल्पलाइन पर कॉल करें।

शिकायत या जानकारी के लिए अपने जिला पदाधिकारी, पुलिस अधीक्षक, अनुमण्डल पदाधिकारी, प्रखण्ड विकास पदाधिकारी, स्थानीय थाना, मुखिया/सरपंच/पार्षद, महिला हेल्पलाइन 181, स्वयं सहायता समूह, आंगनबाड़ी केन्द्र पर संपर्क करें।

महिलाओं और किशोरियों का साथी 181

किसी भी फोन या मोबाईल से निःशुल्क 181 डायल करें।

अभिभावक सरपंच मुखिया मौलवी पंडित आंगनवाड़ी सेविका लड़की

लड़की वालों के साथ हैं हम, दहेज-प्रथा के ख़िलाफ़ हैं हम

महिला एवं बाल विकास निगम, बिहार द्वारा जनहित में जारी

मंजरी

स्त्री के मन की

www.emanjari.com

ECO NEEDS FOUNDATION
MAY ALL BE HAPPY

THE OFFSETTERS (INDIA) PRIVATE LIMITED
design, pre-press and color offset printing

We Care
INTERNATIONAL SCHOOL

bansal TUTORIALS

takshila
connect to the universe

COMFED
PRIDE OF BIHAR
Sudha

Canara Bank

SAGE 50

SULABH

GYAN GANGA
ज्ञानम् भारः क्रियां विना

पावरग्रिड

पथ पुल निर्माण निगम

पटना नगरपालिका
1952
CITY OF PATNA

महिला एवं बाल विकास निगम, बिहार
समाज कल्याण विभाग

Limagrain

आप हमें ई–मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई–मेल भी कर सकते हैं। इस विषय में विशेष जानकारी equityasia@gmail.com पर ली जा सकती है। प्रकाशक की अनुमति के बिना पत्रिका में प्रकाशित किसी भी सामग्री का अन्यत्र इस्तेमाल करना कॉपीराइट का उल्लंघन माना जाएगा।

© इक्विटी फाउंडेशन